



मालवा

की

लोककथाएं

सतवंती



लोक-कथा-माला—४

सतवंती

—मालवा की लोक-कथाएं—

डा० धीरेन्द्र वर्मा [illegible]-संग्रह

चंद्रशेखर दुबे



१९५८

सत्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९५८
मूल्य
डेढ़ रुपया

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स
१० दरियागंज
दिल्ली

प्रकाशकीय

हमारे लोक-साहित्य में लोक-कथाओं का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। उनमें लोक-जीवन की बड़ी ही सजीव तथा मनोरंजक झांकी मिल जाती है।

हिंदी तथा उसके परिवार की जनपदीय भाषाओं की लोक-कथाओं से हिंदी के पाठक परिचित हो सकें, इस उद्देश्य से हमने इस लोक-कथा-माला का प्रकाशन प्रारंभ किया है। इसमें अबतक तीन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पहली में हिंदी-परिवार की विभिन्न भाषाओं की लोक-कथाएं मूल भाषा में हिन्दी-रूपांतर के साथ दी गई हैं, दूसरी में ब्रज की लोक-कथाएं हैं; तीसरी में बुंदेलखंड की।

हमें हर्ष है कि इस चौथे संग्रह द्वारा मालवी लोक-कथाएं पाठकों के हाथों में पहुंच रही हैं। ये कहानियां बड़ी ही रोचक तथा मनोरंजक हैं। अन्य संग्रहों की भांति पुस्तक के अंत में एक कहानी मूल मालवी भाषा में भी दे दी गई है।

विश्वास है कि इस माला की अन्य पुस्तकों की भांति यह पुस्तक भी बड़ी लोकप्रिय होगी।

इस माला में हिंदी-परिवार की सभी जनपदीय भाषाओं की लोक-कथाओं के संग्रह निकाले जायंगे। बाद में भारतीय भाषाओं की लोक-कथाएं भी ली जायंगी।

—मंत्री

विषय-सूची

सतवंती

: १ :

दो भाई

किसी गांव में दो भाई रहते थे। बड़ा अमीर था, छोटा गरीब। एक दिन गरीब भाई के यहां ईंधन बिल्कुल खतम हो गया। गरीब भाई की स्त्री को एक तरकीब सूझी। इनके बाड़े में बाप-दादा के जमाने की लकड़ी की गणपति की एक मूर्ति थी। स्त्री ने भूख से बेकल होने पर एक कुल्हाड़ी अपने पति के हाथ में देते हुए कहा, "जाओ, उस गणपति की मूर्ति के टुकड़े कर लाओ। आज का काम तो इससे चल जायगा। मुझसे अब भूखों नहीं मरा जाता।"

गरीब भाई हिचकिचाया। उसने स्त्री को समझाया, "अरी, यह देवता की मूर्ति है। फिर, वह बाप-दादा के हाथ की निशानी है।"

लेकिन स्त्री तो भूख के मारे तिलमिला रही थी। उसने पति की एक न सुनी। हारकर पति को जाना पड़ा। उसने गणपति की मूर्ति के पास जाकर कुल्हाड़ी एक ओर रख दी। हाथ जोड़कर उनसे कहा, "महाराज, मैं अपनी मर्जी से नहीं आया हूं। मेरी स्त्री ने मुझे जबरदस्ती भेजा है। वह भूख से व्याकुल हो रही है। हमें क्षमा करें।"

इतना कहकर उसने मूर्ति के टुकड़े करने के लिए जैसे ही

कुल्हाड़ी तानी कि मूर्ति में से आवाज आई—"ठहर-ठहर। तू मेरी तोंद में रोज हाथ डालाकर, तेरा काम हो जाया करेगा।"

गरीब भाई गणपति के चरणों में गिरकर क्षमा याचना करने लगा। चलते समय उसने उनकी तोंद में हाथ डाला। दस लड्डू और दस बाटी मिल गई। उसकी प्रसन्नता का पार न रहा। उस दिन से उसका जीवन बड़े आनंद से बीतने लगा।

अमीर भाई को उसका यह सुख खलने लगा। उसने सोचा कि हो न हो, इसे कहीं गड़ा धन मिल गया है। कहां तो रोज फाके होते थे, लड़ाई-झगड़े होते थे, कहां अब चैन की बंसी बज रही है। जरूर कुछ-न-कुछ दाल में काला है।

सो एक दिन अमीर की स्त्री चूल्हा सुलगाने के लिए आग लेने का बहाना करके उसके घर आई। गरीब भाई की औरत भोली थी। उसने कह दिया, "बहन, हमारे यहां तो अब चूल्हा ही नही जलता।"

अमीर भाई की औरत को और भी अचरज हुआ। उसने पूछा, "तो फिर खाते क्या हो?"

गरीब भाई की स्त्री ने सारा हाल कह सुनाया। अमीर की औरत दौड़ी-दौड़ी अपने पति के पास गई और उसे सब बातें बता कर बोली, "गणपति पर तो अपना भी हक है। तुम भी जाकर उनको कुल्हाड़ी से डराओ। उन्होंने तुम्हारे भाई को दिया है तो हमें क्यों नहीं दिया?"

अमीर ने अपनी स्त्री को समझाया, "परमात्मा ने हमें पहले ही सबकुछ दे रखा है।"

लेकिन स्त्री नहीं मानी। उसने जिद ठान ली। आखिर अमीर भाई को कुल्हाड़ी लेकर गणपति के पास जाना पड़ा। कुल्हाड़ी

तानकर वह बोला, "महाराज, मैं अपनी मरजी से नहीं आया हूं। मेरी स्त्री ने हठ ठान ली है।"

गणपति की मूर्ति में से आवाज आई, "ठहर-ठहर। तू भी मेरी तोंद में हाथ डालाकर, तेरा भी काम हो जाया करेगा।"

अमीर भाई ने कुल्हाड़ी फेंककर गणपति की तोंद में हाथ डाला। मगर लड्डू-बाटी तो उसे वहां मिले नहीं, उल्टे उसका हाथ ही वहां चिपक गया।

काफी देर हो जाने पर भी अमीर भाई नहीं लौटा तो उसकी स्त्री उसे देखने आई। उसे वहां चिपका देखकर उसने छुड़ाने की कोशिश की, मगर जैसे ही उसने आदमी को हाथ लगाया कि वह भी चिपक गई। इसी तरह इन्हें छुड़ाने की कोशिश करने पर इनके बाल-बच्चे व नौकर-चाकर सभी चिपक गए।

अब ये सब गणपति के सामने खूब गिड़गिड़ाये, खूब क्षमा मांगी। काफी देर बाद गणपति बोले, "यदि तुम अपनी जमीन-जायदाद, दौलत सभी में से आधा हिस्सा अपने गरीब भाई को देना मंजूर करो तो तुम छूट सकते हो।"

मरता क्या न करता! अमीर भाई ने गणपति की यह शर्त मान ली। गणपति ने उन्हें छोड़ दिया। अमीर भाई ने फौरन अपनी जमीन-जायदाद, धन-दौलत सभी में से आधा हिस्सा अपने गरीब भाई को दे दिया। सब चीजों का बंटवारा करके वह गणपति के पास गया, बोला, "महाराज, अब तो आप प्रसन्न हैं?"

गणपति ने कहा, "नहीं, अभी तुम्हारे मकान के पाट में सुइयां खुसीं रह गई हैं। उनका भी बंटवारा करो।"

अमीर भाई ने वह भी कर दिया। उस दिन से सब आनंद से रहने लगे।

: २ :

सवा मन कंचन

किसी जमाने की बात है। एक आदमी था। उसका नाम था सूर्यनारायण। वह स्वयं तो देवलोक में रहता था, किन्तु उसकी मां और स्त्री इसी लोक में रहती थीं। सूर्यनारायण सवा मन कंचन इन दोनों को देता था और सवा मन कंचन सारी प्रजा को। प्रजा चैन से दिन काट रही थी, किन्तु मां-बहू के दिन बड़ी मुश्किल से गुजर रहे थे। दोनों दिनोंदिन सूखती जा रही थीं।

एक दिन बहू ने अपनी सास से कहा, "सासूजी, और लोग तो आराम से रहते हैं, पर हम भूखों मरे जा रहे है। अपने बेटे से जाकर कहो न, वे कुछ करें।"

बुढ़िया को बहू की बात जंच गई। वह लाठी टेकती-टेकती देवलोक पहुंची। सूर्यनारायण दरबार में बैठे हुए थे। द्वारपाल ने जाकर उन्हें खबर दी, "महाराज, आपकी माताजी आई है।"

सूर्यनारायण ने पूछा, "कैसे हाल हैं ?"

द्वारपाल ने कहा, "महाराज, हाल तो कुछ अच्छे नहीं है। फटे-पुराने, मैले-कुचैले कपड़े पहने हैं। साथ में न कोई नौकर है, न चाकर।"

सूर्यनारायण ने हुक्म दिया, "जाओ, बाग में ठहरा दो।"

ऐसा ही किया गया। सूर्यनारायण काम-काज से निबटकर मां के पास गये। पूछा, "कहो मां, कैसे आई ?"

बुढ़िया बोली, "बेटा, तू सारे जग को पालता है। मगर हम

भूखों मरती हूं !"

सूर्यनारायण को बड़ा अचरज हुआ। उसने पूछा, "क्यों मां, भूखों क्यों मरती हो ? जितना कंचन तुम दो को देता हूं, उतना बाकी की दुनिया को देता हूं। दुनिया तो उतने से कंचन में चैन कर रही है। तुम उसका आखिर करती क्या हो ?"

बुढ़िया बोली, "बेटा, हम कंचन को हांडी में उबाल लेती हैं। फिर वह उबला हुआ पानी पी लेती हैं।"

सूर्यनारायण हँसते हुए बोला, "मेरी भोली मां, कंचन कहीं उबालकर पीने की चीज है ! इसे तुम बाजार में बेचकर बदले में अपनी मनचाही चीजें ले आया करो। तुम्हारा सारा दुख दूर हो जायगा।"

बुढ़िया खुश होती हुई वापस लौटी। बहू शहद की मक्खी बन-बन कर देवलोक में आ गई थी। उसने मां-बेटे की सारी बातचीत सुन ली। चर्चा खतम होने पर वह बुढ़िया से पहले ही घर पहुंच गई और सूर्यनारायण ने जैसा कहा था, कंचन को बाजार में बेचकर घी-शक्कर, आटा-दाल सब ले आई। बुढ़िया जब लाठी टेकती-टेकती वापस आई तो बहू ने भोली बनकर पूछा, "सासूजी, क्या कहा उन्होंने ?"

सास घर के बदले रंग-ढंग देखकर बोली, "जो कुछ कहा था, वह तो तूने पहले ही कर डाला।"

सास-बहू के दिन अब बड़े आनंद से कटने लगे। इनके घर में इतनी बरकत हो गई कि दोनों से लक्ष्मी समेटी नहीं जाती थी। दोनों घबरा गईं। एक दिन बहू ने फिर सास से कहा, "सासूजी, तुम्हारे बेटे ने पहले तो दिया नहीं, अब दिया तो इतना कि संभाला ही नहीं जाता। उन्हींके पास फिर जाओ, वे ही कुछ तरकीब फिर

बनायेंगे ।"

बुढ़िया बहू के कहने से फिर चली। इस बार बुढ़िया ने नौकर-चाकर, लाव-लश्कर साथ ले लिया। पालकी में बैठकर ठाठ से चली। बहू शहद की मक्खी बनकर पहले ही वहां पहुंच गई।

बुढ़िया के पहुंचने पर द्वारपाल ने सूर्यनारायण को खबर दी, "महाराज, आपकी मां आई हैं।"

सूर्यनारायण ने पूछा, "कैसे हाल आई हैं ?" द्वारपाल ने कहा, "महाराज, बड़े ठाठ-बाट से। नौकर-चाकर, लाव-लश्कर सभी साथ हैं।"

सूर्यनारायण ने कहा, "महल में ठहरा दो ।"

बुढ़िया को महल में ठहरा दिया गया।

काम-काज से निबटकर सूर्यनारायण महल में आया। मां से पूछा, "कहो मां, क्या अभी भी पूरा नहीं पड़ता ?"

मां बोलीं, "नहीं बेटा, अब तो तूने इतना दे दिया कि उसे संभालना मुश्किल हो गया है। हम तंग आ गई हैं। अब हमें बता कि हम उस धन का क्या करें ?"

सूर्यनारायण ने हँसते हुए कहा, "मेरी भोली मां, यह तो बड़ी आसान बात है। खाते-खरचते जो बचे उससे धर्म-पुण्य करो कुएं-बावड़ी खुदवाओ। परोपकार के ऐसे बहुत-से काम हैं।"

शहद की मक्खी बनी बहू पहले ही से मौजूद थी, उसने सब सुन लिया और फौरन घर लौटकर सदाव्रत बिठा दिया। कुंआ, बावड़ी, धर्मशाला आदि का काम शुरू कर दिया। बुढ़िया जब लौटी तो उसने भोली बनकर पूछा, "उन्होंने क्या कहा, सासूजी ?"

बुढ़िया ने घर के बदले रंग-ढंग देखकर कहा, "बहू, जो

कुछ उसने कहा था, वह तो तूने पहले ही कर डाला।"

इसी तरह कई दिन बीत गये। एक दिन सूर्यनारायण को अपने घर की सुधि आई। उसने सोचा कि चलें, देखें तो सही कि दोनों के क्या हाल-चाल हैं! इधर मां कई दिनों से आई नहीं! यह सोच सूर्यनारायण साधू का रूप धर कर आया। आते ही इनके दरवाजे पर आवाज लगाई—अलख निरंजन। आवाज सुनते ही बुढ़िया मुट्ठी में आटा लेकर साधू को देने गई। साधु ने कहा—"माई, मैं आटा नहीं लेता। मैं तो आज तेरे यहां ही भोजन करूंगा। तेरी इच्छा हो तो भोजन करा दे, नहीं तो मैं शाप देता हूं।"

शाप का नाम सुनते ही बुढ़िया ने गिड़गिड़ाकर कहा, "नहीं-नहीं, बाबा, शाप मत दो। मैं भोजन कराऊंगी।"

साधू ने कहा, "माई, हमारी एक शर्त और सुन लो। हम तुम्हारी बहू के हाथ का ही भोजन करेंगे।"

बुढ़िया ने कहा, "जो आज्ञा, महाराज।"

बहू ने छत्तीस तरह के पकवान, बत्तीस तरह की चटनी बनाई। बुढ़िया साधू को बुलाने गई। साधू ने कहा, "माई, हम तो उसी पाट पर बैठेंगे, जिसपर तेरा बेटा बैठता था; उसी थाली में खायेंगे, जिसमें तेरा बेटा खाता था। जबतक हम भोजन करेंगे तबतक तेरी बहू को पंखा झलना पड़ेगा। तेरी इच्छा हो तो बोल, नहीं तो मैं शाप देता हूं।"

बुढ़िया शाप के नाम से कांपने लगी। उसने कहा, "ठहरो। मैं बहू से पूछ लूं।"

बहू से सास ने पूछा तो वह बोली, "मैं क्या जानूं? तुम कहो, वैसा करने को तैयार हूं।"

बुढ़िया बोली, "बेटी, बड़ा अड़ियल साधू है। पर अब क्या करें ?"

आखिर सूर्यनारायण जिस पाट पर बैठता था वह पाट बिछाया गया, उसकी खाने की थाली में भोजन परोसा गया। बहू सामने पंखा झलने बैठी। तब साधू महाराज ने भोजन किया।

बुढ़िया ने सोचा—चलो, अब महाराज से पीछा छूटा। मगर महाराज तो बड़े विचित्र निकले! भोजन करने के बाद बोले, "माई, हम तो यहीं सोवेंगे और उसी पलंग पर जिसपर तेरा बेटा सोता था। और देख, तेरी बहू को हमारे पैर, दबाने होंगे। तेरी राजी हो तो बोल, नहीं तो मैं शाप देता हूं।"

बुढ़िया बड़ी घबराई। बहू से फिर सलाह करने गई। बहू ने कह दिया—मैं क्या जानूं। तुम जानो।

साधू ने देर होती देखी तो कहा, "अच्छा माई, चल दिये।"

बुढ़िया हाथ जोड़कर बोली, "नहीं-नहीं, महाराज, आप जाइए मत। आप जैसा कहेंगे वैसा ही होगा। बड़ी मुश्किल से हमारे दिन बदले हैं। शाप मत दीजिए।"

सूर्यनारायण जिस पलंग पर सोता था वह पलंग बिछाया गया। साधू महाराज ने शयन किया। बहू उनके पैर दबाने लगी। तभी छः महीने की रात हो गई। सारी दुनिया त्राहि-त्राहि करने लगी।

अब बुढ़िया समझी कि यह तो मेरा ही बेटा है। उसने कहा, "बेटा, कभी तो आया नहीं और आया तो यों अपनेको छिपाकर क्यों आया ? जा, अपना काम-काज संभाल। दुनिया में हाहाकार मचा हुआ है।"

सूर्यनारायण वापस देवलोक लौट गया। इधर सूर्यनारायण

की पत्नी ने नौ महीने बाद एक सुंदर तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। वह बालक दिनोंदिन बड़ा होने लगा।

एक दिन वह अपने दोस्तों के साथ गुल्ली-डंडा खेल रहा था। खेल ही खेल में उसने दूसरे लड़कों की तरह बाप की सौगंध खाई। उसके साथी उसे चिढ़ाने लगे—तेरे बाप हैं कहां? तूने कभी उन्हें देखा है? तू तो बिना बाप का है?

लड़का रोता-रोता अपनी दादी के पास आया, बोला, "मां, मुझे बता कि मेरे पिताजी कहां है?"

बुढ़िया ने सूर्यनारायण की ओर उंगली से संकेत कर कहा, "वे रहे बेटा। तेरे पिता को तो सारी दुनिया जानती है।"

बालक ने मचलते हुए कहा, "नहीं मां, सचमुच के पिता बता।"

बालक ने जिद ठान ली। बुढ़िया उसे लेकर देवलोक चली। नौकर-चाकर साथ में लेकर पालकी में सवार होकर दोनों वहां पहुंचे। महल में ठहराये गये। सूर्यनारायण काम-काज से निबट-कर महल में आये। बुढ़िया ने उनकी ओर संकेत कर कहा, "ये हैं तेरे पिता।"

सूर्यनारायण ने बालक को गोदी में लेकर प्यार किया। बालक का रोना बंद हो गया।

उस दिन से वे सब चैन से रहने लगे।

: ३ :

भगवान की हार

किसी गांव में एक ब्राह्मण और उसकी ब्राह्मणी रहते थे। उनके कोई बाल-बच्चा नहीं था। उन्होंने भगवान की बड़ी लगन से मानता की। परमेश्वर ने प्रसन्न होकर उन्हें एकदम तीन संतानें दीं—कौवा, बिल्ली और शेर। उन्होंने इन्हींपर संतोष कर लिया।

कौवा बड़ा होने पर रोज भगवान के दरबार की छत पर जाकर बैठने लगा। एक दिन भगवान के दरबार में इसी गांव की चर्चा छिड़ी। भगवान ने उस गांव में उस साल अकाल फैलाने का निश्चय किया। चूहों से खेतों में गेहूं नष्ट करवाने का तय हुआ।

कौवा भगवान की कचहरी की छत पर बैठा-बैठा यह सब सुन रहा था। उसने फौरन अपने गांव में जाकर यह खबर फैला दी। गांववाले इस बुरी खबर को सुनकर डर गये। उनकी यह दशा देख बिल्ली ने उन्हें धीरज बंधाया। बोली, "मेरे होते तुम्हे चूहों से डरने की क्या जरूरत है?"

गांववालों की हिम्मत बंधी।

जो दिन तय हुआ था उसी दिन भगवान की आज्ञा से चूहों के दल-के-दल उस गांव के खेतों की ओर उमड़ पड़े। बिल्ली तो बाट जोह ही रही थी। उसने झपटकर कुछको तो मार डाला, कुछ को घायल कर दिया, बचे-खुचे चूहे जान लेकर भाग गये। गांववाले आफत से बच गये।

एक दिन कौवा फिर खबर लाया कि भगवान ने अब हिरनों

के झुंड फसल बिगाड़ने के लिए भेजना तय किया है। गांववाले फिर घबरा गये। इस बार शेर ने उन्हें साहस बंधाया। कहा, "मेरे रहते हिरनों की क्या मजाल कि वे इस गांव की फसल को खराब कर डालें ?"

गांववालों का डर कम हो गया।

नियत दिन हिरनों के झुंड-के-झुंड गांव की ओर आ धमके। शेर तालाब की पाल पर बैठा-बैठा उनकी बाट जोह रहा था। वह दहाड़ा। उसकी आवाज सुनकर ही हिरनों की सिट्टी गायब हो गई। कुछ बेहोश हो गये। कुछ भाग खड़े हुए। बचों-खुचों को शेर ने जा दबोचा।

भगवान को जब यह हाल मालूम हुआ तो उन्हें बड़ा क्रोध आया। ऋद्धि-सिद्धि उनके पास ही बैठी थीं। उन्होंने हाथ जोड़-कर कहा—"महाराज, अभी तक गांववाले बच गये हैं तो क्या हुआ ! अब वे हमसे बचकर जायंगे कहां ? आपकी कृपा से हमारे हाथ में बड़ी ताकत है। हम हर खलिहान में एक मानी से ज्यादा धान नहीं होने देंगे।"

ऋद्धि-सिद्धि की बात सुनकर भगवान का क्रोध शांत हो गया। उन्होंने कहा, "ऐसा ही हो।"

कौवा रोज की तरह छत पर बैठा-बैठा सब सुन रहा था। उसने गांव में जाकर यह खबर भी फैला दी।

गांववालों ने इस बार एक रास्ता निकाला। जब अनाज कटकर आया तो उन्होंने एक-एक खलिहान न करके, कई-कई खलिहान कर डाले। गांव के हर आदमी ने ऐसा ही किया। भगवान की इच्छा से हर खलिहान में मानी-मानी धान हो गया। गांववाले निहाल हो गये। घर-घर लड्डू-बाटी बनने लगे। लोग

अकाल का नाम ही भूल गये।

रमते जोगी नारद ने जाकर भगवान को यह हाल सुनाया। भगवान ने उस गांव से हार मानी। उस दिन से सब मौज से रहने लगे।

: ४ :

राईं के भरतार

एक गुरुकुल था। उसमें बहुत से बालक पढ़ते थे। उनमें एक का नाम था दामोदर। गुरुकुल के गुरुजी के एक कन्या थी—राईं। वह रोज पास की नदी में पानी भरने जाती थी। उसकी मां किसी-न-किसी गुरुकुल के बालक को रोज उसका घड़ा उठवाने के लिए साथ भेज देती थी।

एक दिन दामोदर की बारी आई। वह तो इस मौके की राह देख ही रहा था। राईं की ओर उसका बहुत झुकाव था।

घड़ा भर लेने पर राईं ने रोज की तरह साथ आनेवाले से उसे उठवाने के लिए कहा। दामोदर ने जरा मुस्कराते हुए कहा, "पहले तुम मेरी एक शर्त पूरी करो। तब मैं उठवाऊंगा।"

राईं ने अचरज से भरकर पूछा, "क्या ?"

दामोदर ने उसके पास आकर कहा, "हाथ में पानी लेकर तीन बार कहो—राईं के भरतार दामोदर।"

राईं नासमझ नहीं थी। वह दामोदर का मतलब समझ गई। उसने तुनककर कहा, "नहीं कहते, जाओ।"

दामोदर मुंह फेरकर बैठ गया।

बेचारी राईं बड़ी मुश्किल में पड़ गई। वह करे तो क्या करे ? चार-छः बार दामोदर की खुशामद की, मगर वह टस-से-मस न हुआ। राईं ने आसपास देखा तो कोई और दिखाई न दिया। उसे देर हो रही थी। मां के नाराज होने का डर लगा था। उसने हारकर

अकाल का नाम ही भूल गये।

रमते जोगी नारद ने जाकर भगवान को यह हाल सुनाया। भगवान ने उस गांव से हार मानी। उस दिन से सब मौज से रहने लगे।

: ४ :

राई के भरतार

एक गुरुकुल था। उसमें बहुत से बालक पढ़ते थे। उनमें एक का नाम था दामोदर। गुरुकुल के गुरुजी के एक कन्या थी—राई। वह रोज पास की नदी में पानी भरने जाती थी। उसकी मां किसी-न-किसी गुरुकुल के बालक को रोज उसका घड़ा उठवाने के लिए साथ भेज देती थी।

एक दिन दामोदर की बारी आई। वह तो इस मौके की राह देख ही रहा था। राई की ओर उसका बहुत झुकाव था।

घड़ा भर लेने पर राई ने रोज की तरह साथ आनेवाले से उसे उठवाने के लिए कहा। दामोदर ने जरा मुस्कराते हुए कहा, "पहले तुम मेरी एक शर्त पूरी करो। तब मैं उठवाऊंगा।"

राई ने अचरज से भरकर पूछा, "क्या ?"

दामोदर ने उसके पास आकर कहा, "हाथ में पानी लेकर तीन बार कहो—राई के भरतार दामोदर।"

राई नासमझ नहीं थी। वह दामोदर का मतलब समझ गई। उसने तुनककर कहा, "नहीं कहते, जाओ।"

दामोदर मुंह फेरकर बैठ गया।

बेचारी राई बड़ी मुश्किल में पड़ गई। वह करे तो क्या करे ? चार-छः बार दामोदर की खुशामद की, मगर वह टस-से-मस न हुआ। राई ने आसपास देखा तो कोई और दिखाई न दिया। उसे देर हो रही थी। मां के नाराज होने का डर लगा था। उसने हारकर

दामोदर से कहा, "अच्छा तो लो, मैं कहे देती हूं।"

दामोदर ने खुशी से उछलकर कहा, "तो कहो।"

राई ने हाथ में पानी लेकर तीन बार कह दिया--राई के भरतार दामोदर।

तब दामोदर ने उसका घड़ा उठवा दिया। राई मुंह फुलाये घर पहुंची। उसका यह हाल देखकर मां ने पूछा, "बेटी, क्या बात है ?"

राई ने रुंधे स्वर में कहा, "मां, तुम इस दामोदर को मेरे साथ मत भेजा करो।"

मां ने पूछा, "क्यों, क्या हुआ ?"

राई ने जो कुछ हुआ था, सब कह सुनाया। मां ने बेटी को गले से लगाते हुए कहा, "चलो, अच्छा ही हुआ, बेटी। किसीको तो तुझे सौंपना ही था। दामोदर क्या बुरा है !"

इसके बाद एक दिन राई की मां ने दामोदर से पूछा, "तुम्हारे घर में कौन-कौन हैं ?"

उसने कहा, "कोई नहीं।"

इस घटना के कुछ दिन उपरांत राई की मां ने शुभ मुहूर्त निकलवाकर बेटी का विवाह दामोदर के साथ कर दिया।

ब्याह के कुछ दिन पश्चात् दामोदर ने राई से कहा, "अब मैं अपने घर जाऊंगा।"

राई ने अचरज से कहा, "तुम तो कहते थे कि तुम्हारे कोई है नहीं।"

चलने की तैयारी करते हुए दामोदर ने कहा—"नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं है। मेरे सब कोई हैं। तुम्हारे साथ विवाह करने के लिए मैंने झूठ बोल दिया था।"

राई ने कहा, "जब घर में लोग थे तो झूठ बोलने की क्या जरूरत थी ?"

दामोदर मुस्कराता हुआ चल दिया। राई ने उसका पल्ला पकड़कर पूछा, "और मेरा क्या होगा ?" दामोदर ने राई को ढाढ़स बंधाते हुए कहा, "वहां पहुंचते ही मैं तुम्हारे लिए हंस के द्वारा गहने-कपड़े भेजूंगा। तुम उस हंस को यह मोतियों की माला दिखा देना। वह तुम्हारे पास आ जायगा। फिर तुम आ जाना।"

राई ने उसकी बात मानली। दामोदर ने अपने गले से मोती की माला उतारकर उसे दे दी और चला गया।

घर पहुंचते ही उसने कीमती गहने-कपड़े एक पिटारे में सजाये और उस पिटारे को भरोसे के एक हंस के गले में लटकाते हुए उसे समझाया, "देखो, जब तुम्हें कोई मोतियों की माला दिखाये तो तुम इस पिटारे की चीजें उसे दे देना।"

दामोदर की पहली स्त्री रुक्मिणी दरवाजे की आड़ में खड़ी-खड़ी यह सब सुन रही थी। उसे दामोदर के रंग-ढंग देखकर पहले ही संदेह हो गया था। अब उस संदेह की पुष्टि हो गई। वह सौतिया डाह से जलने लगी। उसने फौरन बाहर जाकर मोतियों की माला दिखाकर हंस को रोक लिया और उसके गले में लटके पिटारे को उतार लिया। बदले में दूसरा पिटारा लटका दिया, जिसमें गेरुवे कपड़े, तुलसी की माला और भभूत आदि चीजें थीं।

हंस उस दूसरे पिटारे को लेकर उड़ चला। उड़ते-उड़ते वह राई के देस पहुंचा। राई उसकी प्रतीक्षा कर ही रही थी। उसे देखकर वह गद्‌गद् हो गई। उसने मोतियों की माला दिखाकर हंस को रोक लिया और उसके गले में टंगे पिटारे को खोल लिया। उसके अंदर उसने जो देखा उससे सुन्न रह गई। पर करती क्या ?

थोड़ी देर में वह संभली तो उसने इसे पति की आज्ञा मानकर सिर माथे लिया।

भगवे कपड़े उसने पहन लिये, भभूत सारे बदन में मलली और तुलसी की माला हाथ में लेकर दामोदर का नाम जपते हुए तुलसी की परिक्रमा करने लगी। इस तरह परिक्रमा करते-करते उसे कई वर्ष बीत गये। वह जमीन में धंस गई।

इधर दामोदर जब राई की प्रतीक्षा करते-करते थक गया तो एक दिन वह कुछ बहाना करके घर से चल दिया। चलते-चलते वह राई के मुकाम पर आया। उसका यह हाल देखकर उसे बड़ा दुख हुआ। वह समझ गया कि हो-न-हो, इस मामले में रुक्मिणी का हाथ अवश्य है।

उसने राई के पास जाकर उसे सारी बात बताई और समझाकर उसे अपने नगर में ले आया। एक कुम्हार के यहा ठहरा दिया और खुद घर चला आया। जाते-जाते उससे कह गया कि मैं घर से लोगों को गाजे-बाजे सहित तुम्हें लिवाने भेजूगा। चली आना। और भी बहुत-सी बातें समझा गया।

घर पहुंचकर दामोदर ने पेट के दर्द का बहाना किया और तड़पने लगा। घर के लोग उसकी यह हालत देख घबरा गये। नगर के वैद्य-हकीम सबको बुलवाया गया, मगर कोई फायदा न हुआ। दामोदर पहले से भी ज्यादा छटपटाने लगा। घर के लोगो के छक्के छूट गये। अब क्या करें!

दामोदर ने कराहते हुए कहा, "कुम्हार के यहां एक मेहमान आई है। वह पेट अच्छा मलती है। हाय, मरा! उसे बुलवाओ!

घर के लोग दौड़े-दौड़े उसे बुलाने गये। मिलने पर उसने कह दिया, "मैं पराये मर्द का पेट नहीं मलती।"

उन्होंने बहुतेरा समझाया, नाजुक हालत बताई, पर वह किसी भी तरह तैयार न हुई। लोग मुंह लटकाये लौट आये। दामोदर को सब हाल कह सुनाया। दामोदर ने कहा, "अरे, उसे इस घर की बहू बनाकर ही ले आओ। मेरा दर्द तो मिटे। मैं तो मरा जा रहा हूं। जाओ, गाजे-बाजे के साथ उसे ले आओ।"

गाते-बजाते लोग उसे लेने गये और मान के साथ घर ले आये। आते ही राई ने दामोदर के पेट को हाथ लगाया कि उसका दर्द गायब हो गया।

रुक्मिणी अभी तक चुपचाप सब लीला देख रही थी। वह सब समझ गई। अब उससे न रहा गया। उसने राई को गले लगा लिया और दामोदर से बोली—इतना छल-प्रपंच करने की क्या जरूरत थी? सीधे ही इसे घर ले आना था।

उस दिन से सब मिलकर अच्छी तरह से रहने लगे।

: ५ :

ब्राह्मण की बेटी

एक साहूकार था। उसके एक बेटा था। उसने अपने इस बेटे की शादी की। बहू आई तो साहूकार ने उससे पूछा, "क्यों बहू, ऋतु कौन-सी अच्छी रहती है ?"

थोड़ी देर सोचकर बहू बोली, "ससुरजी, मुझे तो जाड़े की ऋतु अच्छी लगती है। गरम-गरम खाना खाते हैं, गरम-गरम कपड़े पहनते हैं। मीठी नींद सोते हैं।"

ससुर को बहू पसंद नहीं आई। उसने अपने बेटे की दूसरी शादी राजा की लड़की से कर दी। जब बहू घर में आई तो साहूकार ने उससे भी वही सवाल किया, "क्यों बहू, ऋतु कौन-सी अच्छी होती है ?"

बहू ने कहा, "ससुरजी, मुझे तो गर्मी की ऋतु अच्छी लगती है। हल्का-फुल्का पहनते-खाते हैं, खूब नहाते हैं। न जाड़े की-सी 'सी-सी', न बारिश की-सी किच-किच। भला और क्या चाहिए ?

साहूकार को यह बहू भी पसंद नहीं आई। उसने अपने बेटे की तीसरी शादी मंत्री की लड़की से करदी। तीसरी बहू के घर में पैर रखते ही साहूकार ने पूछा, "क्यों बहू, तुम्हें कौन-सी ऋतु पसद है ?"

मंत्री की बेटी तनिक सोचकर बोली, "ससुरजी, मुझे तो वर्षा ऋतु पसंद है। रिमझिम-रिमझिम पानी बरसता है। चारों ओर हरियाली छा जाती है। बागों में झूले पड़ जाते हैं। सचमुच

बड़ा अच्छा लगता है।"

साहूकार को यह बहू भी पसंद न आई। उसने अपने बेटे की चौथी शादी एक गरीब ब्राह्मण की लड़की से कर दी। इस चौथी बहू के आते ही साहूकार ने वही प्रश्न किया, "क्यों बहू, तुझे कौन-सी ऋतु अच्छी लगती है ?"

ब्राह्मण की बेटी कुछ देर सोचकर बोली, "सच पूछो तो मुझे सभी ऋतुएं पसंद हैं। क्या जाड़ा, क्या गर्मी, क्या बारिश, सभी के निराले ठाठ हैं।"

साहूकार को यह बहू पसंद आ गई। उसने अपने बेटे से कहा, "अब मेरे मन-लायक बहू इस घर में आई है।"

साहूकार की बहुएं काम-काज से निवटकर कंकर-पत्थर बीन कर पांचे खेल रही थीं। साहूकार उधर से निकला। अपनी बहुओं का कंकर-पत्थर से पांचे खेलना उसे अच्छा न लगा। उसने पांच लाल बहुओं को पांचे खेलने के लिए दे दिये। बहुएं पांचे खेलने के बाद उन लालों को वहीं फेंककर चल दीं। ब्राह्मण की बेटी ने उन लालों को उठाकर अपनी थैली में रख लिया और थैली कमर से खोंसली।

एक दिन साहूकार ने अपनी बहुओं से कहा, "लाओ, अपने गहने दे दो। सुनार से मंजवा लाऊं।"

सब बहुओं ने अपने-अपने गहने दे दिये। पर ब्राह्मण की बेटी ने नहीं दिये। उसने ससुर से कहा, "तांबा-पीतल मंजवाया जाता है। सोने-चांदी को मंजवाने की क्या जरूरत ?"

साहूकार ने बाकी की तीन बहुओं के गहनों की पोटली बांधकर मंजवाने के लिए रख दिये। भाग्य की बात कि उसी रात डाकुओं ने साहूकार के घर पर धावा बोल दिया। सब अपनी-अपनी

जान लेकर भाग खड़े हुए।

दूर जंगल में जाकर परिवार के सभी लोग इकट्ठे हुए। साहूकार ने सबसे पूछा, "किसीके पास कुछ हो तो निकालो। कुछ खाने-पीने को लाऊं?"

किसीके पास कुछ भी नहीं निकला। सब बिस्तर में जैसे सोये थे, वैसे ही उठकर भाग खड़े हुए थे। किसीके तन पर ढंग का कपडा भी नहीं था। ब्राह्मण की बेटी ने यह हाल देख अपनी कमर मे खुसी थैली में से एक लाल निकाला और उसे ससुर की हथेली पर रख दिया। साहूकार खुश हो गया।

वह उस लाल को लेकर पास के शहर में गया। फटे-पुराने कपड़े होने के कारण जौहरियों की दूकान में जाने की वह हिम्मत नहीं कर पाया। हर चौराहे पर खड़ा होकर चिल्लाता, "लो, लाल। कोई है, जो लाल ले ले।"

लोग साहूकार को पागल समझकर हँसने लगे। लाल भी कोई भला यों चौराहे पर चिल्लाकर बेचता है! अचानक एक काइया जौहरी की नजर साहूकार पर पड़ गई। उसने उसे अपनी दुकान मे बुला लिया और लाल लेकर साहूकार को धक्के देकर बाहर निकाल दिया। साहूकार अपना लाल मांगने लगा तो उसने धमका कर कहा, "सीधी तरह चला जा, नहीं तो पुलिस के हवाले कर दूगा। न जाने कहां से इसे चुराकर ले आया है!"

साहूकार लाल गंवाकर अपने परिवार के पास मुंह लटकाये पहुंचा। उसका यह हाल देख साहूकार का बेटा दूसरा लाल ब्राह्मण की बेटी से लेकर शहर के लिए रवाना हुआ। वह भी अपने बाप की तरह हर चौराहे पर चिल्लाने लगा, "लाल लो। कोई है, जो लाल ले ले।"

जौहरी की निगाह इसपर भी पड़ गई। वह इसे भी अपनी दुकान में ले गया और इसके साथ भी वही किया। बेचारा यह भाई भी मुंह लटकाये जंगल में लौट आया।

इसके बाद ब्राह्मण की बेटी शहर गई। शहर में वह पहले-पहल धोबी के यहां पहुंची। धोबी से उसने अपनी पसंद के बढ़िया मर्दाने कपड़े किराये पर लिये। इन कपड़ों को पहनकर मर्द बन कर वह सईस के यहां पहुंची।

सईस से उसने एक बढ़िया घोड़ा किराये पर लिया। इस घोड़े पर सवार होकर वह सराफे में पहुंची। सारे सराफे में इधर-से-उधर दो-चार चक्कर उसने योंही लगाये। सारे जौहरियों में खल-बली मच गई। आखिर वही जौहरी हाथ जोड़कर इसके पास आया और बोला, "क्या तलाश कर रहे हैं ?"

ब्राह्मण की बेटी ने मर्दाने लहजे में जरा अकड़कर कहा, "हमें कुछ लाल खरीदने हैं। किसी जौहरी के पास अच्छे कीमती लाल हैं क्या ?"

वह जौहरी हाथ जोड़कर बोला—"आप मेरी दुकान पर चलिये। शायद आपका काम हो जाय।"

ब्राह्मण की बेटी उस जौहरी के साथ गई। उस जौहरी ने बाप-बेटे से छीने दोनों लाल पेश कर दिये। वह उन लालों को पह-चान गई। उसने उस जौहरी से उन लालों का मूल्य पूछा। जौहरी ने बेहिसाब बताया। ब्राह्मण की बेटी ने अपनी जेब से बाकी के तीनों लाल निकालकर कहा, "हमारे पास इसमें के तीन लाल हैं। यदि हम इन्हें बेचें तो क्या तुम इतनी कीमत दोगे ?"

जौहरी सिटपिटा गया। उसने दूसरा दांव चला। बोला, आपके लाल मेरे लाल से घटिया हैं

जान लेकर भाग खड़े हुए।

दूर जंगल में जाकर परिवार के सभी लोग इकट्ठे हुए। साहूकार ने सबसे पूछा, "किसीके पास कुछ हो तो निकालो। कुछ खाने-पीने को लाऊं ?"

किसीके पास कुछ भी नहीं निकला। सब विस्तर में जैसे सोये थे, वैसे ही उठकर भाग खड़े हुए थे। किसीके तन पर ढंग का कपड़ा भी नहीं था। ब्राह्मण की बेटी ने यह हाल देख अपनी कमर में खुसी थैली में से एक लाल निकाला और उसे ससुर की हथेली पर रख दिया। साहूकार खुश हो गया।

वह उस लाल को लेकर पास के शहर में गया। फटे-पुराने कपड़े होने के कारण जौहरियों की दूकान में जाने की वह हिम्मत नहीं कर पाया। हर चौराहे पर खड़ा होकर चिल्लाता, "लो, लाल। कोई है, जो लाल ले ले।"

लोग साहूकार को पागल समझकर हँसने लगे। लाल भी कोई भला यों चौराहे पर चिल्लाकर बेचता है ! अचानक एक काइयां जौहरी की नजर साहूकार पर पड़ गई। उसने उसे अपनी दुकान में बुला लिया और लाल लेकर साहूकार को धक्के देकर बाहर निकाल दिया। साहूकार अपना लाल मांगने लगा तो उसने धमका कर कहा, "सीधी तरह चला जा, नहीं तो पुलिस के हवाले कर दूंगा। न जाने कहां से इसे चुराकर ले आया है !"

साहूकार लाल गंवाकर अपने परिवार के पास मुंह लटकाये पहुंचा। उसका यह हाल देख साहूकार का बेटा दूसरा लाल ब्राह्मण की बेटी से लेकर शहर के लिए रवाना हुआ। वह भी अपने बाप की तरह हर चौराहे पर चिल्लाने लगा, "लाल लो। कोई है, जो लाल ले ले।"

जौहरी की निगाह इसपर भी पड़ गई। वह इसे भी अपनी दुकान में ले गया और इसके साथ भी वही किया। बेचारा यह भाई भी मुह लटकाये जंगल में लौट आया।

इसके बाद ब्राह्मण की बेटी शहर गई। शहर में वह पहले-पहल धोबी के यहां पहुंची। धोबी से उसने अपनी पसंद के बढ़िया मर्दाने कपड़े किराये पर लिये। इन कपड़ों को पहनकर मर्द बन कर वह सईस के यहां पहुंची।

सईस से उसने एक बढ़िया घोड़ा किराये पर लिया। इस घोड़े पर सवार होकर वह सराफे में पहुंची। सारे सराफे में इधर-से-उधर दो-चार चक्कर उसने योंही लगाये। सारे जौहरियों में खल-बली मच गई। आखिर वही जौहरी हाथ जोड़कर इसके पास आया और बोला, "क्या तलाश कर रहे हैं?"

ब्राह्मण की बेटी ने मर्दाने लहजे में जरा अकड़कर कहा, "हमें कुछ लाल खरीदने है। किसी जौहरी के पास अच्छे कीमती लाल हैं क्या?"

वह जौहरी हाथ जोड़कर बोला—"आप मेरी दुकान पर चलिये। शायद आपका काम हो जाय।"

ब्राह्मण की बेटी उस जौहरी के साथ गई। उस जौहरी ने बाप-बेटे से छीने दोनों लाल पेश कर दिये। वह उन लालों को पह-चान गई। उसने उस जौहरी से उन लालों का मूल्य पूछा। जौहरी ने बेहिसाब बताया। ब्राह्मण की बेटी ने अपनी जेब से बाकी के तीनों लाल निकालकर कहा, "हमारे पास इसमें के तीन लाल हैं। यदि हम इन्हें बेचें तो क्या तुम इतनी कीमत दोगे?"

जौहरी सिटपिटा गया। उसने दूसरा दांव चला। बोला, "आपके लाल मेरे लाल से घटिया हैं।"

ब्राह्मण की बेटी बोली, "दूसरे जौहरियों से इन्हें जंचवा लो। यदि मेरे लाल घटिया निकले तो मैं ये लाल तुम्हें इनाम में दे दूंगा। बुलाओ दूसरे जौहरियों को।"

उसे दूसरे जौहरियों को मजबूरन बुलवाना पड़ा। सबने जांच करके कह दिया कि ये पांचों लाल बिल्कुल एक-से हैं। अब ब्राह्मण की बेटी ने उस जौहरी को धमकाया—सीधी तरह ये दोनों लाल मेरे हवाले कर दो। तुमने मेरे आदमियों से छीन लिये हैं। देते हो या मैं पुलिस को खबर करूं?

जौहरी सारी चालबाजी भूल गया। वह ब्राह्मण की बेटी के पैरों पर गिर पड़ा। गिड़गिड़ाते हुए बोला—"मुझे माफ करें। मुझे मालूम न था कि वे आपके आदमी हैं।"

ब्राह्मण की बेटी ने चार लाल अपने पास रख लिये। एक लाल उसी जौहरी को उसके बताये दाम में बेच दिया। जौहरी ने मन-मारकर ऊंचे दाम दिये और अपनी जान छुड़ाई।

ब्राह्मण की बेटी ने सईस को उसका घोड़ा लौटा दिया, धोबी को उसके कपड़े दे दिये। खाने-पीने का सामान लेकर जंगल में लौटी। रुपये, चार लाल और सामान उसने ससुर के सामने रख दिया। ससुर खुश हो गये। उन्होंने सबको सुनाकर कहा, "देखो, मैं कहता था न कि यह मेरे मन लायक बहू है!"

खा-पीकर सब लोग वापस घर लौटे। डाकू घर में कुछ भी नहीं छोड़ गये थे। ब्राह्मण की बेटी ने उस रात अपने गहने मांजने को नहीं दिये थे, वह उन्हें पहने रही थी। इसलिए बस वे ही बचे रहे।

इन गहनों को बेचकर साहूकार ने फिर अपना कारोबार शुरू किया। थोड़े ही दिनों में पहले जैसा काम चल पड़ा।

: ६ :

तूवर की फली

एक गांव में एक बड़ी कंजूस स्त्री रहती थी। धर्म-कर्म करना तो दूर, उसके नाम से भी उसे चिढ़ थी। किसीको एक दाना भी उसने कभी दान में नहीं दिया।

उसका यह रवैया देखकर भगवान को बड़ी चिंता हुई, पर उसे एक और मौका देने का निश्चय किया।

उन्होंने एक फकीर को उस बुढ़िया के यहां भेजा। फकीर ने उसके दरवाजे पर आवाज लगाई, "माई, भगवान के नाम पर कुछ मिल जाय।"

बुढ़िया ने फकीर को दुतकारते हुए कहा, "चल हट यहां से, बड़ा आया भगवानवाला!"

फकीर ने बुढ़िया को बार-बार समझाया। "माई, कुछ तो दे दे। एक दाना ही दे दे।"

मगर बुढ़िया ने कुछ भी देने से साफ इंकार कर दिया। बुढ़िया के आंगन में तूवर (अरहर) की फलियां सूख रही थीं। और कोई चारा न देख वह उस ढेर में से एक मुट्ठी फलियां भर-कर भाग खड़ा हुआ। बुढ़िया फकीर को कोसने लगी—चोट्टे, जो तू इसे ले जाय, तो मेरा नरक ले जाय!

पर फकीर ने बुढ़िया की एक न सुनी। फलियां लेकर वह चलता बना।

मरने के बाद बुढ़िया भगवान के वहां पहुंची तो उसे वे ही

फलियां दी गईं। बुढ़िया ने जैसे ही उन फलियों को चीरा तो उनमें से नरक निकला। बुढ़िया ने इसका कारण पूछा तो उसे उस दिन वाली घटना सुना दी गई।

बुढ़िया ने अपना सिर पीट लिया। मगर अब रोने-धोने से क्या होना-जाना था! अब तो उसके भाग्य में बस वे ही फलियां थीं।

जैसा बोया, वैसा काटा।

: ७ :

आठ बातें

एक राजा का कुंवर था। वह अपने गुरु से सब विद्या सीख कर विदा होने लगा तो गुरु ने कहा, "बेटा, ये आठ बातें और याद रखना।"

कुंवर बोला, "कौन-सी आठ बातें, गुरुजी?"

गुरु बोले, "पैसा गांठ, जोरू साथ, छत की बहन, अनछत का भाई, रसभर नगरी, विषबेल कन्या, जागे सो पावे, सोवे सो खोवे।"

कुंवर ने इन आठों बातों को अच्छी तरह से याद कर लिया और गुरु से विदा होकर चल दिया।

चलते-चलते अपने देश में आया। वहां उसे पता लगा कि उसके बाप-भाइयों को हराकर पड़ोस के राजा ने उनका राज्य छीन लिया है और उन्हें कैद में डाल दिया है। कुंवर अपनी जान को भी खतरे से खाली न जानकर उल्टे पांव लौट पड़ा।

सोचने लगा कि अब कहां जाय? उसे अपनी पत्नी और ससुराल का खयाल आया। वहीं चल दिया। चलते-चलते अपने ससुर की नगरी के पास पहुंचा। पनघट पर पनिहारिनें पानी भर रही थीं। कुंवर ने उनके द्वारा रावले में खबर पहुंचाई कि तुम्हारे जमाई आये हैं।

कुंवर के ससुर ने पनिहारिनों से पूछा, "कैसे हाल से आये हैं वह?"

पनिहारिनों ने जो देखा था, सो कह दिया।

ससुर ने सब सुनकर नौकर-चाकरों के द्वारा कुंवर के पास खबर भिजवाई कि हमें लजाने क्यों आये हो ? यदि हमारी बेटी को ले जाने आये हो तो ढंग से आओ। इस तरह तो लोग मेरी खिल्ली उड़ायेंगे।

कुंवर यह समाचार पाते ही वापस लौट गया। उसे अपने गुरु की बात याद आ गई। उन्होंने ठीक ही कहा था—पैसा गांठ, जोरू साथ। गांठ में जो पैसा होता है, वही अपना होता है। यही हाल स्त्री का है। स्त्री अपने साथ हो तभी अपनी है, नहीं तो वह पराई हो जाती है।

कुंवर इसी तरह पछताता हुआ चला जा रहा था। राह में उसकी बहन का गांव आया। कुंवर ने सोचा—चलो, बहन को भी परख लें। पनघट पर पनिहारिनें मिलीं। उनके द्वारा उसने अपनी बहन के पास अपने आने की खबर पहुंचाई। बहन ने पनिहारिनों से पूछा—मेरा भाई कैसे हाल से आया है ?

पनिहारिनों ने कह दिया—हाल तो बुरे हैं। मैले-कुचैले कपड़े हैं। साथ में नौकर-चाकर कुछ भी नहीं हैं।

बहन ने तत्काल दासियों के द्वारा संदेशा भेज दिया कि मेरे सास-ससुर को क्यों लजाने आये हो ? आना था तो फौज-फाटे, लाव-लश्कर के साथ आते !

बेचारा कुंवर बहन का यह उत्तर पाकर चल दिया। चलते-चलते वह अपने भाई के देश में पहुंचा। यह भाई बचपन से ही घर से निकल गया था। कुंवर के मन में अपने इस भाई के लिए तरह-तरह के विचार उठ रहे थे। उसे शक हो रहा था कि वह पहचानेगा भी या नहीं ? फिर भी कुंवर भाई के महल की ओर बढ़ता

[illegible] गया। भाई अपने महल के झरोखे में बैठा हुआ था। कुंवर को ध्यान से देखने पर उसे विश्वास हो गया कि यह तो मेरा भाई है। वह फौरन महल में से बाहर आया और अपने भाई को उसने गले से लगा लिया।

कुंवर को वह बड़े मान से महल में ले गया, उसे अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने को दिये, बढ़िया भोजन कराया। कुंवर भाई के महल में सुख से रहने लगा। उसे गुरुजी की बात याद आ गई—छत की बहन, अनछत का भाई। दोनों ही बातें सच निकलीं।

दो-चार दिन रहकर कुंवर ने भाई से विदा मांगी। भाई ने उसे रोका, मगर वह माना नहीं, चल दिया।

चलते-चलते एक नगर में पहुंचा। रात हो जाने पर वह एक बूढ़ी कुम्हारिन के यहां ठहर गया। उसी रात को राजा के यहां से नौकर-चाकर आये। वे कुम्हारिन के इकलौते बेटे को पकड़कर ले जाने लगे। बुढ़िया फूट-फूटकर रोने लगी। कुंवर ने बुढ़िया से पूछा, "ये तुम्हारे लड़के को क्यों ले जा रहे हैं?"

बुढ़िया रोते-रोते बोली, "भैया, इस देस में ऐसा ही रिवाज है। रोज एक घर से एक लड़के को राजा के नौकर ले जाते हैं। राजकुमारी से उसकी शादी की जाती है। मगर सुबह रोज वह लड़का मरा हुआ मिलता है। आजतक कोई भी बचा नहीं। आज मेरे लड़के की बारी है।"

कुंवर बुढ़िया को धीरज बंधाते हुए बोला, "मां, घबराओ नहीं। तुम्हारे लड़के के बजाय मैं चला जाता हूं।"

बुढ़िया बोली, "नहीं भैया, तुम्हारी मां की गोद सूनी करके मैं अपनी गोद हरी नहीं रखना चाहती।"

मगर कुंवर न माना। आखिर बुढ़िया राजी हो गई। राजा

के नौकर कुंवर को महल में ले गये। राजकुमारी से कुंवर की शादी हो गई।

कुंवर रात को चौपड़ बिछाकर बैठ गया। राजकुमारी आधी रात तक खेलती रही। फिर उसे नींद आने लगी तो वह सो गई। मगर कुंवर नहीं सोया। उसे गुरु की बात याद आई—रसभर नगरी विषबेल कन्या। जागे सो पावे, सोवे सो खोवे। वह राजकुमारी के सो जाने पर भी जागता रहा।

थोड़ी देर बाद ही राजकुमारी की नाक में से एक काली नागिन निकली। वह पलंग के आस-पास चक्कर काटने लगी। कुवर ने झट उसे मार डाला। अब उसकी समझ में आया कि लोग यहा आकर क्यों मर जाते थे।

सुबह रोज की तरह जल्लाद लाश उठाने आये तो कुंवर को जीवित देखकर वे दौड़े-दौड़े राजा के पास गये। यह समाचार सुनकर राजा फूला नहीं समाया। उसने कुंवर को राज-पाट सौंप दिया और स्वयं जंगल में तपस्या करने चला गया।

कुंवर ठाठ से राज करने लगा। कुछ दिनों बाद वह सेना लेकर अपने देस गया और वहां के राजा को हराकर अपने मां-बाप, भाई-भौजाइयों को कैद से छुड़ा लिया।

गुरुजी की बताई आठ बातों को कुंवर कभी नही भूला।

: ८ :

बवारिया की बहू

बवारिया नाम का एक आदमी था। सात उसके बेटे थे। बवारिया और उसके बेटे रोज राजा के यहां चंदन की लकड़ी डालने जाते थे। बदले में राजा के यहां से इन्हें रोज सेर भर धान मिलते थे। उनके बदले ये रोज चने ले आते। घर पर इन सबने अपने-अपने पत्थर के चूल्हे बना रखे थे। उन्हींपर मटके के टुकड़ों में ये अपने-अपने चने भूनकर खा-पी लेते और पड़े रहते। इसी तरह से इनके दिन बीत रहे थे।

एक दिन पड़ोसिन ने बवारिया से पूछा, "क्यों जी, तुम्हारे किसी लड़के की शादी नहीं हुई?"

बवारिया ने कहा, "बड़े लड़के की होगई है।"

"तो तुम बहू को क्यों नहीं बुलवा लेते?" पड़ोसिन ने अचरज से पूछा।

बवारिया ने लज्जित होकर कहा, "इसमें कई दिक्कतें हैं। पहले तो लड़के के पास अच्छे कपड़े नहीं हैं। फटे-पुराने कपड़ों में उसे पहली बार ससुराल कैसे भेजूं?"

पड़ोसिन ने मुस्कराते हुए कहा, "अरे, तो इसमें क्या है! दो-चार दिन के लिए मैं अपने लड़के के कपड़े दे दूंगी। उन्हें पहना कर उसे ससुराल भेज दो।"

बवारिया राजी हो गया। उसने पड़ोसिन के लड़के के कपड़े अपने लड़के को सौंपते हुए कहा, "बेटा, इन कपड़ों को पहनकर तू

अपनी ससुराल चला जा और बहू को ले आ। यहां बड़ी तकलीफ होती है।"

लड़का अच्छी तरह से नहा-धोकर उन कपड़ों को पहनकर ससुराल पहुंचा। पहुंचते ही ससुराल में शोर मच गया कि जमाई आये हैं।

तीन-चार दिन रहकर लड़का अपनी पत्नी को बिदा कराकर चला आया। बहू को सीधे घर ले जाते शर्म आई, इसलिए पड़ोसिन के यहां उसे छोड़ दिया और खुद जंगल से चंदन की लकड़ी लेने चल दिया।

पड़ोसिन ने बहू के हाल-चाल पूछे, उसे खिलाया-पिलाया, फिर कहा, "चलो बहू, तुम्हें तुम्हारा घर बता दूं।"

बहू चौंकी, "मेरा घर! मेरा घर और कौन-सा है?" पड़ोसिन बहू का हाथ पकड़कर ले गई और उसे उसके घर पहुंचा दिया। बहू ने देखा कि उस घर में आठ चूल्हे बने हुए हैं, राख का ढेर लगा है, मटकों के टुकड़े पड़े हुए हैं। उसने पड़ोसिन से पूछा, "क्या यही है मेरा घर?"

पड़ोसिन बोली, "हां।"

इतना कहकर पड़ोसिन तो चल दी, बहू कुछ देर सोचती रही। फिर कुछ निश्चय-सा करके उठी और पड़ोसिन से झाड़ू मांग लाई। आठ चूल्हों के बजाय उसने एक चूल्हा रहने दिया। सात हटा दिये। राख के ढेर व मटकों के टुकड़े वगैरा सब उसने फेंक दिये। घर को झाड़-बुहार कर साफ कर दिया।

शाम को बवारिया और उसके बेटे लौटे। घर का कायापलट देखकर वे बड़े खुश हुए। मगर अपने चूल्हे न देखकर बड़े बिगड़े। सब बहू को दोष देने लगे, "हम अब खायेंगे क्या?"

बहू ने डरते-डरते पूछा, "तुम लोग कुछ लाये हो क्या ?"

सबने अपनी-अपनी चने की गठरी उसके सामने रखते हुए कहा, "इतने चने एक चूल्हे पर कबतक भूनोगी ? तुम हमें भूखों मार डालोगी !"

बहू ने उनकी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। वह सब चनों को लेकर पड़ोसिन के यहां गई। पड़ोसिन की चक्की में उनको पीस लाई। फिर बेसन और रोटी बनाकर उसने सबको खाने बैठा दिया। सब लोग अब उसी बहू की बड़ी तारीफ करने लगे। देवरों ने भाभी से कहा, "भाभी, तुम बड़ी अच्छी हो। आज पहली बार इतना बढ़िया भोजन मिला है।"

बहू रोज आधे चनों में ही सबको भरपेट खिला देती थी। आधे चने बचने लगे। एक दिन उसने अपने ससुर से पूछा, "क्यों पिताजी, आपको राजा के यहां से रोज चने ही मिलते हैं ? और कुछ नहीं मिलता ?"

बवारिया ने कहा, "नहीं बेटी, राजा ने तो कह रखा है कि हम जो चाहें सो अनाज ले जायं। हम अपनी सहूलियत के लिए रोज चने ही ले आते थे। तू कहे तो दूसरे अनाज भी ला सकते हैं ?"

बहू बोली, "कल से आप सब तरह का अनाज ले आया कीजिए।"

बवारिया ने अगले दिन से सब तरह का अनाज लाना शुरू कर दिया। बहू रोज तरह-तरह का भोजन बनाने लगी। सबको खिलाने-पिलाने के बाद भी आधा अनाज रोज उसके पास बच जाता था। वह सब अनाजों को संभालकर रखती जाती थी। जब उसके पास काफी अनाज इकट्ठा हो गया तो वह बवारिया से

एक दिन बोली, "पिताजी, अब आप लकड़ी लेने न जाया कीजिए। आपको अब इतनी मेहनत नहीं करनी चाहिए।"

बवारिया बहू की बात सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। बहू उसका इतना खयाल रखती है, यह जानकर वह गद्‌गद् हो गया। उसने बहू को समझाया, "बेटी, तेरी बात सही है। मगर मैं मेहनत नहीं करूंगा तो पेट कैसे भरेगा?"

बहू बोली, "मैंने काफी अनाज बचाकर रखा है। आप तो गल्ले की दुकान लगाकर बैठा कीजिए।"

ऐसी लक्ष्मी बहू देने के लिए वह परमात्मा को बार-बार धन्य-वाद देने लगा। उसने बहू का कहना मानकर उसी दिन से दूकान लगा ली।

एक दिन बहू ससुर से बोली, "पिताजी, आप रोज दोपहर को घर रोटी खाने आते हो तो खाली हाथ आते हो। रास्ते में कोई चीज पड़ी मिल जाय तो उसे उठाते लाया करो। कंकर-पत्थर सभी काम के होते हैं।"

बवारिया को बहू की यह बात जंच गई। उसने कहा, "बहू, ठीक कहती हो। एक पंथ, दो काज।"

अब वह रोज नियम से कोई-न-कोई चीज उठा लाता। कभी कंकर तो कभी पत्थर कभी गोबर, तो कभी कुछ और।

एक दिन उसे कुछ भी दिखाई न दिया। एक मरा हुआ सांप पड़ा था। उसीको वह लकड़ी पर टांगकर ले आया और अपने बाड़े में पटक दिया।

संयोग से एक चील रानी का नौलखा हार चोंच में दबाये उड़ी चली आ रही थी। उड़ते-उड़ते वह बवारिया के मकान पर आई तो उसे बाड़े में पड़ा सांप दिखाई दे गया। चील ने अपनी चोंच

में दबाया हुआ हार वहीं छोड़ दिया और सांप लेकर उड़ गई।

अचानक बवारिया की बहू की निगाह उस हार पर पड़ी। उसने उसे उठाकर घर में रख लिया। थोड़ी देर बाद ही नगर में डोंडी पिटी—एक चील रानी का नौलखा हार लेकर उड़ गई है। जिस किसीको वह हार मिले, वह राजा के पास पहुंचा दे। राजा उसे बहुत इनाम देगा।

बवारिया ने शाम को यह बात घर में सुनाई। बहू भोली बनकर सब सुनती रही।

दूसरे दिन फिर डोंडी पिटी—रानी का हार अभी तक नहीं मिला है। जो हार के बारे में कुछ भी मदद कर सकता हो, दरबार में आवे।

शाम को बहू ने फिर भोली बनकर ससुर से पूछा—"आज फिर डोंडी पिटी थी क्या ?"

बवारिया ने कहा, "बेटी, रानी का हार मिल ही नहीं रहा है। बड़े-बड़े ज्योतिषी-पंडित सिर खपा रहे हैं।"

बहू ने कहा, "पिताजी, आप दरबार में क्यों नहीं जाते ?"

बवारिया बहू की बात पर बड़ा चकराया। ऐसी समझदार बहू अपने ससुर से मजाक करेगी, यह उसने सोचा ही नहीं था। उसने बहू की ओर आश्चर्य से देखते हुए कहा, "दरबार में मैं जाऊं ? मैं भला क्या जानता हूं ?"

बहू ने गंभीरता से कहा, "मैं कहती हूं। मेरी प्रार्थना है, इसलिए चले जाइए। रद्दी कागजों का एक पुलंदा बगल में दबा लीजिए। दरबार में पहुंचकर उन कागजों को ऊंचा-नीचा करके पढ़ने का ढोंग करिये। फिर उंगलियों पर हिसाब लगाकर कह दीजिये—हार को कहीं गीली जगह में ढूंढ़ो, मिल जायगा।"

बवारिया बहू की बात सुनकर बड़ा चकराया। आज बहू को हो क्या गया है? उसने आजतक बहू की कोई बात टाली नही थी, मगर आज वह हिचकिचा रहा था। उसने कहा, "बेटी, अगर हार नहीं मिला तो राजा मेरी गरदन उड़वा देगा।"

ससुर को ढांढस बंधाते हुए बहू ने कहा, "आप जाइए तो। आपका बाल भी बांका न होगा।"

बेचारा बवारिया बहू के बताये अनुसार रद्दी कागजों का पुलिंदा बगल में दबाये डगमगाते पैरों से दरबार में पहुंचा। राजा ने मुस्कराते हुए कहा, "बवारिया, मैं सब तरफ से निराश हो चुका हूं। तू कुछ जानता हो तो बता?"

बवारिया ने अपनी पोथी देखकर, उंगली पर हिसाब लगाकर कहा—"आसपास गीली जगह में ढूंढ़िये, हार मिल जायगा।"

राजा और दरबारी सब चकित रह गये। बड़े-बड़े तो बह गये, ढोली[1] कहे कि मैं पार लगा दूं। सबको विश्वास हो गया कि बवारिया का दिमाग खराब हो गया है। राजा ने तेज होकर बवारिया से कहा, "देख बवारिया, तू अच्छी तरह सोच ले। अगर हार नहीं मिला तो...?"

बवारिया ने नम्रता से कहा, "महाराज, मेरा गणित कहता है कि हार मिल जायगा। आप ढुंढ़वाइए तो।"

अपनी बात कहकर बवारिया घर लौट गया। बहू से उसने कांपते स्वर में कहा, "बेटी, अब मेरा जीवन तेरे हाथों में है। राजा को हार नहीं मिला तो वह मुझे जिंदा न छोड़ेगा।"

बहू ने ससुर को धीरज बंधाया।

---

[1] ढोल बजानेवाला

राजा के हुक्म पर सब नौकर-चाकर गीली जगहों में हार ढूंढ़ने लगे। मगर सारे दिन ढूंढ़ने पर भी हार कहीं न मिला। राजा ने दो घुड़सवार बड़े सवेरे बवारिया को बुलाने के लिए भेजे। बवारिया ने कांपते हुए अपनी बहू से पूछा, "अब क्या करूं?"

बहू बोली, "कह दो घूरे में ढूंढ़ें।"

बवारिया ने घुड़सवारों से यही बात कह दी। बहू हार को महल के पीछेवाले घूरे में रात को छिपा आई थी। ढूंढ़ने पर मिल गया। राजा और दरबारी बवारिया का लोहा मान गये। राजा ने हाथी, घोड़े, पालकी आदि भेजकर बवारिया को दरबार में बुलवाया। वह गया। राजा ने उसका बड़ा आदर किया। फिर उससे कहा, "भाई, तुमने मुझे बचा लिया। जो मांगना हो वह मांगो।"

बवारिया बोला, "महाराज, आपकी दया से सब आनंद है।"

महाराज ने हठ किया, "नहीं बवारिया, कुछ तो तुम्हें मांगना ही होगा।"

राजा की यह हठ देख बवारिया बोला, "अच्छा महाराज, मैं अपनी बहू से सलाह करके बताऊंगा?"

राजा ने कहा, "अच्छी बात है।" बवारिया बहू से सलाह करने आया। बहू ने कहा, "पिताजी, राजा से पहले वचन लेना चाहिए कि धन-तेरस से दिवाली के दिन तक सारे नगर में किसी के भी यहां दीये न जलें, महल तक में नहीं।

बवारिया की कुछ भी समझ में न आया। वह बेचारा फिर दरबार में पहुंचा। राजा ने पूछा, "क्यों, कर आये सलाह?"

"जी हां, महाराज।"—बवारिया बोला।

राजा ने कहा, "तो फिर मांगो !"

बवारिया बोला, "नहीं महाराज, पहले वचन दीजिए।"

महाराज ने हँसते हुए कहा, "बवारिया, तुम तो अब बड़े चतुर हो गये हो। अच्छा, लो वचन दिया।"

बवारिया ने कहा, "महाराज, धनतेरस से लेकर दिवाली की अमावस तक सारे नगर में, महल तक में, कहींपर भी दीये न जलाये जायं। बस मेरी झोपड़ी में दीया जले। मुझे यही चाहिए।"

राजा ने बवारिया की मूर्खता पर हँसते हुए कहा, "धन-दौलत, जमीन-जायदाद, जो चाहिए, मांग लो, बवारिया। त्योहार के दिन लोगों के यहां अंधेरा करवाने में तुम्हें क्या मिलेगा !"

बवारिया ने उत्तर दिया, "महाराज, आप वचन दे चुके हैं। मुझे तो यही चाहिए।"

महाराज को 'हां' भरनी पड़ी। राजा ने नगर में डोंडी पिटवादी कि तेरस, चौदस और अमावस के दिन कोई दीया न जलाये, नहीं तो उसे कड़ा दंड दिया जायगा।

सारे नगर के लोग बवारिया को कोसने लगे।

धनतेरस की रात आई। सारे शहर में घुप्प अंधेरा। सिर्फ बवारिया की झोंपड़ी में दीया जल रहा था। अंधेरे में सुदशा और कुदशा घूमने निकलीं। सुदशा को अंधेरे के कारण कदम-कदम पर ठोकरें लगने लगीं। कुदशा तो अंधेरे की आदी थी। वह हँसती-कूदती घर-घर में घुस गई। सुदशा ठोकरें खाती-खाती सारे नगर में घूमती फिरी, मगर उसे किसी घर में उजेला न दिखाई दिया। इसलिए वह निराश होकर नगर के बाहर निकली।

नगर के बाहर बवारिया की झोंपड़ी में रोशनी देखकर उसे

हर्ष हुआ। उसने कहा, "चलो, आज इसी झोंपड़ी में चलें।" उसने झोंपड़ी का द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "कौन है ?"

सुदशा ने जवाब दिया, "मैं हूं, सुदशा।"

बवारिया की बहू ने फिर पूछा, "बेटी बनकर आई हो या बहू बनकर ?"

सुदशा ने कहा, "बेटी बनकर।"

बवारिया की बहू बोली, "तो दरवाजा नहीं खुलेगा। बेटी का क्या, वह तो पराया धन ठहरी। बहू बनकर आओ, तभी दरवाजा खुलेगा।"

सुदशा लौट गई।

चौदस की रात को सुदशा-कुदशा दोनों फिर निकलीं। नगर में आज भी बड़ा अंधेरा था। कुदशा कूदती-किलकती हर घर में घुस गई। सुदशा अंधेरे में ठोकरें खाती-खाती फिर बवारिया के दरवाजे पर पहुंची। द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "बोलो, बेटी बनकर आई हो या बहू बनकर ?"

सुदशा बोली, "बेटी बनकर।"

बवारिया की बहू ने दरवाजा नहीं खोला। सुदशा आज फिर निराश होकर लौट गई।

दिवाली की अमावस के दिन फिर सुदशा व कुदशा निकलीं। सुदशा ने सोचा, आज तो घर-घर मेरा स्वागत होगा। मगर सारे नगर में आज भी घुप्प अंधेरा छाया हुआ था। कुदशा बड़ी खुश हुई। सुदशा फिर ठोकरें खाती हुई बवारिया की झोंपड़ी के पास पहुंची। वहां दीया जल रहा था। सुदशा ने द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "बोलो, आज भी बहू बनकर आई हो

राजा ने कहा, "तो फिर मांगो !"

बवारिया बोला, "नहीं महाराज, पहले वचन दीजिए।"

महाराज ने हँसते हुए कहा, "बवारिया, तुम तो अब बड़े चतुर हो गये हो। अच्छा, लो वचन दिया।"

बवारिया ने कहा, "महाराज, धनतेरस से लेकर दिवाली की अमावस तक सारे नगर में, महल तक में, कहींपर भी दीये न जलाये जायं। बस मेरी झोपड़ी में दीया जले। मुझे यही चाहिए।"

राजा ने बवारिया की मूर्खता पर हँसते हुए कहा, "धन-दौलत, जमीन-जायदाद, जो चाहिए, मांग लो, बवारिया। त्योहार के दिन लोगों के यहां अंधेरा करवाने में तुम्हें क्या मिलेगा !"

बवारिया ने उत्तर दिया, "महाराज, आप वचन दे चुके हैं। मुझे तो यही चाहिए।"

महाराज को 'हां' भरनी पड़ी। राजा ने नगर में डोंडी पिटवादी कि तेरस, चौदस और अमावस के दिन कोई दीया न जलाये, नहीं तो उसे कड़ा दंड दिया जायगा।

सारे नगर के लोग बवारिया को कोसने लगे।

धनतेरस की रात आई। सारे शहर में घुप्प अंधेरा। सिर्फ बवारिया की झोंपड़ी में दीया जल रहा था। अंधेरे में सुदशा और कुदशा घूमने निकलीं। सुदशा को अंधेरे के कारण कदम-कदम पर ठोकरें लगने लगीं। कुदशा तो अंधेरे की आदी थी। वह हँसती-कूदती घर-घर में घुस गई। सुदशा ठोकरें खाती-खाती सारे नगर में घूमती फिरी, मगर उसे किसी घर में उजेला न दिखाई दिया। इसलिए वह निराश होकर नगर के बाहर निकली।

नगर के बाहर बवारिया की झोंपड़ी में रोशनी देखकर उसे

हर्ष हुआ। उसने कहा, "चलो, आज इसी झोंपड़ी में चलें।" उसने झोंपड़ी का द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "कौन है ?"

सुदशा ने जवाब दिया, "मैं हूं, सुदशा।"

बवारिया की बहू ने फिर पूछा, "बेटी बनकर आई हो या बहू बनकर ?"

सुदशा ने कहा, "बेटी बनकर।"

बवारिया की बहू बोली, "तो दरवाजा नहीं खुलेगा। बेटी का क्या, वह तो पराया धन ठहरी। बहू बनकर आओ, तभी दर-वाजा खुलेगा।"

सुदशा लौट गई।

चौदस की रात को सुदशा-कुदशा दोनों फिर निकलीं। नगर में आज भी बड़ा अंधेरा था। कुदशा कूदती-किलकती हर घर में घुस गई। सुदशा अंधेरे में ठोकरें खाती-खाती फिर बवारिया के दरवाजे पर पहुंची। द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "बोलो, बेटी बनकर आई हो या बहू बनकर ?"

सुदशा बोली, "बेटी बनकर।"

बवारिया की बहू ने दरवाजा नहीं खोला। सुदशा आज फिर निराश होकर लौट गई।

दिवाली की अमावस के दिन फिर सुदशा व कुदशा निकलीं। सुदशा ने सोचा, आज तो घर-घर मेरा स्वागत होगा। मगर सारे नगर में आज भी घुप्प अंधेरा छाया हुआ था। कुदशा बड़ी खुश हुई। सुदशा फिर ठोकरें खाती हुई बवारिया की झोंपड़ी के पास पहुंची। वहां दीया जल रहा था। सुदशा ने द्वार खटखटाया। बवारिया की बहू ने पूछा, "बोलो, आज भी बहू बनकर आई हो

या बेटी बनकर ?"

सुदशा ने हारकर कहा, "आज तो बहू बनकर आई हूं।"

बवारिया की बहू ने झोंपड़ी का दरवाजा खोल दिया। सुदशा का अंदर पैर रखना था कि वह झोंपड़ी नवखंडा महल बन गई।

जैसे झोंपड़ी के भाग्य बदले, वैसे सबके बदल गये।

: १ :

कब्र की खबर

किसी नगर में एक कंजूस औरत रहती थी। वह दान-धरम और खैरात के नाम से चिढ़ती थी। कभी भूलकर भी किसीको एक मुट्ठी आटा तक नहीं देती थी।

एक दिन अल्ला मियां को उसकी फिकर पड़ी। उन्होंने कहा, "जब यह औरत यहां आयेगी तो इसे खाने को क्या देंगे? यह कुछ भी तो दान नहीं करती है।"

उस औरत को सही रास्ते पर लाने के लिए खुदा ने एक फकीर को भेजा। उस फकीर ने उस औरत के दरवाजे पर आवाज लगाई, "माई, अल्लाताला के नाम पर कुछ मिल जाय।"

कंजूस औरत ने फकीर को झिड़कते हुए कहा, "भाग यहां से! बड़ा आया है खुदा के नाम पर मांगनेवाला! जा, यहां से तुझे कुछ भी नहीं मिलने का!"

फकीर ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "माई, कुछ तो देना ही पड़ेगा।"

मगर वह औरत कब पसीजनेवाली थी। उसने टका-सा जवाब दे दिया। बोली, "तेरे जैसे बहुत देखे हैं मैंने। भाग यहां से।"

फकीर की जब एक न चली तो उसने हारकर वहां पड़े बादाम के छिलके ही मांगे। कंजूस औरत ने उन छिलकों को भी देने से इंकार कर दिया।

फकीर को अब एक तरकीब सूझी। उसने उस औरत को

लालच देते हुए कहा, "माई, ये छिलके तू मुझे दे दे। मैं तेरे लिए कबर की खबर ला दूंगा। इस काम के लिए अल्ला मियां मुझे पाच सौ गिन्नियां देते हैं। वे गिन्नियां मै तुझे दे दूंगा।"

गिन्नियों का नाम सुनते ही वह औरत पसीज गई। उसने वे बादाम के छिलके फकीर को दे दिये और फकीर से कहा कि तुम कबर की खबर मत लाना। मैं ही ले आऊंगी। उसे डर था कि वह फकीर कहीं गिन्नियां हड़प न करले।

फकीर मान गया। बादाम के छिलके लेकर चला गया।

इधर उस कंजूस औरत ने किया क्या कि फौरन कबर खुदवाई और उसमें जाकर लेट गई। घरवालों से उसने कह दिया कि मुझे सुबह निकाल लेना।

रात को वह औरत पांचसौ गिन्नियों की राह देखने लगी। गिन्नियां तो वहां आईं नहीं। हां, सांप-विच्छुओं ने उसपर धावा बोल दिया। मगर उन बादाम के छिलकों ने उन सांप-बिच्छुओ का मुंह बंद कर दिया। वे उसका बाल भी बांका न कर सके। वह औरत रातभर यह लीला देखती रही। डर के मारे उसकी जान सूख गई। 'अल्ला-अल्ला' करके उसने रात काटी।

सुबह उसके घर के लोग उसे निकालने आये तो उन्होंने देखा कि वह पीली जर्द हो रही है। कबर के बाहर आते ही उसकी जिंदगी बदल गई।

वह जी खोलकर उस दिन से खैरात करने लगी और कबर की खबरवाली घटना जिंदगीभर सबको सुनाती रही।

: १० :

जाको राखै साइयां

एक गांव में एक ब्राह्मण और ब्राह्मणी रहते थे। उनके कोई संतान न थी, इसलिए वे बड़े दुखी थे।

एक दिन ब्राह्मणी ने ब्राह्मण से कहा "तुम रोज सेरभर आटा लाते हो उससे काम नहीं चलता। इस गांव में इससे ज्यादा नहीं मिलता तो दो-चार गांव घूमो। अपने भाग्य में संतान नहीं है तो क्या सेरभर आटे से ज्यादा आटा भी नहीं है ?"

ब्राह्मण अपनी पत्नी की बात मानकर उस दिन गांव छोड़कर परगांव गया। इधर उस दिन उसके खुद के गांव में डोंडी पिटी कि आज राजा की तरफ से दान-पुण्य होगा। सब लोग आयें। अब ब्राह्मणी पछताने लगी—भाग्य की लीला देखो ! गांव छोड़कर कभी उन्होंने बाहर पैर नहीं रखा था। मेरे कहने से आज गये तो आज ही ऐसा हो गया।

शाम को ब्राह्मण वही सेरभर आटा लेकर लौटा। ब्राह्मणी ने उसे डोंडी की बात सुनाई। ब्राह्मण बोला, "अपने भाग्य की बात है यह।"

ब्राह्मणी ने कहा, "क्योंजी, जाकर देखो तो सही, शायद अब भी कुछ मिल जाय।"

ब्राह्मण गया। वहां दान-पुण्य सब हो चुका था। ब्राह्मण को आया देख राजा ने भंडारी से कहा, "देखो, भंडार में कुछ है ?" भंडारी ने भंडार देखकर कहा, "महाराज, सब बंट चुका है। अब

तो सिर्फ बकरी का एक बच्चा रह गया है।"

राजा ने ब्राह्मण से पूछा, "ब्राह्मण देवता, इसे ले जाना चाहो तो ले जाओ।"

ब्राह्मण बड़ी द्विविधा में पड़ गया। बकरी के बच्चे का वह क्या करेगा! उसने राजा से कहा, "महाराज, मैं अपनी स्त्री से पूछ आता हूं।"

ब्राह्मण दौड़ा-दौड़ा अपनी स्त्री के पास आया। उससे सारा हाल कहा। ब्राह्मणी बोली, "तुम तो बकरी के बच्चे को ही ले आओ। अपने कोई बाल-बच्चा है नहीं। इस बच्चे से ही मन बहलाया करेंगे।"

ब्राह्मण बकरी के बच्चे को ले आया। ब्राह्मणी ने उसके पैरों में घुंघरू बांध दिये। बच्चा छम-छम करता हुआ सारे घर में कूदने लगा। इन दोनों को बड़ा अच्छा लगा। ये उस बकरी के बच्चे को अपनी संतान की तरह ही लाड़-प्यार करने लगे।

ब्राह्मण रोज नदी पर स्नान करने जाता तो उस बकरी के बच्चे को अपने साथ ले जाता और किनारे पर हरी घास चरने छोड़ देता। संध्या-पूजा कर जब वह निपटता तो उसे वापस ले आता। एक दिन इसी तरह बच्चा नदी के किनारे चर रहा था। ब्राह्मण आंखें मूंदे ध्यान में मग्न था। तभी उस बकरी के बच्चे का टीले पर से पैर फिसल गया और वह नदी में गिर पड़ा। पानी गहरा था, बकरी का बच्चा डूब गया।

ब्राह्मण की पूजा समाप्त हुई तो उसने उस बकरी के बच्चे को चारों ओर ढूंढ़ा। उसकी लाश उसे पानी पर तैरती दिखाई दी। ब्राह्मण को बड़ा दुख हुआ। उसने कहा, देखो भाग्य की बात। अपनी कोई संतान न होने पर इस बकरी के बच्चे से ही मन बह-

लाया करते थे। किस्मत से यह भी न देखा गया !

पश्चाताप करते-करते ब्राह्मण इस नतीजे पर पहुंचा कि ऐसे जीने से तो मौत ही भली है। आत्म-हत्या कर इस जीवन को समाप्त कर देना उचित है। यह निश्चय कर ब्राह्मण गहरे पानी की ओर बढ़ने लगा। सूर्य-नारायण से यह न देखा गया। उस दिन रविवार था। उन्होंने सोचा—देखो, आज मेरा दिन है और यह ब्राह्मण आत्म-हत्या कर रहा है !

ब्राह्मण गले तक पानी में पहुंच गया। तभी सूर्यनारायण एक ब्राह्मण का वेश बनाकर आये और उन्होंने उस ब्राह्मण का हाथ पकड़ते हुए कहा, "आज के इस शुभ दिन तुम यह क्या कर रहे हो ?"

ब्राह्मण ने उनको अपना दुखड़ा कह सुनाया। सूर्यनारायण ने उसे धीरज बंधाते हुए कहा, "जा, आज से नौ महीने बाद तेरे यहां कन्या होगी।"

ब्राह्मण को इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। मगर फिर भी उसने आत्म-हत्या नहीं की। घर लौट आया।

ठीक नौ महीने बाद ब्राह्मणी ने एक कन्या को जन्म दिया। इस कन्या के होठों पर एक लाल रोज सुबह आ जाता था। उस लाल को उठाने पर ही बच्ची का मुंह खुलता था। दाई ने यह रहस्य बच्ची की मां को नहीं बताया। उसने लाल के लालच में ब्राह्मणी को समझा दिया कि तुम सुबह उठते ही अपनी लड़की का मुंह मत देखा करो। इतनी अधिक उमर में तुम्हारे कन्या हुई है। बच्ची का मुंह देखने से अनिष्ट की आशंका है।

ब्राह्मणी दाई के झांसे में आ गई।

दाई रोज सुबह आकर बच्ची के ओठों पर से लाल उठा लेती

थी। दस दिन पूरे होने पर दाई ने यह रहस्य नाइन को बता दिया। अब दाई के बजाय नाइन रोज बड़े तड़के आकर बच्ची को जगाकर लाल ले जाने लगी। इसी तरह कई महीने बीत गये। नाइन ब्राह्मणी को अनिष्ठ की आशंका से डराती रही और लाल खुद हड़पती रही।

एक दिन ब्राह्मणी जाड़े के दिनों में सुबह-सुबह धूप में बैठी हुई थी। उसकी पड़ोसिन अपनी बच्ची को लेकर उसके पास आ बैठी। पड़ोसिन ने सहज ही ब्राह्मणी से पूछा, "तुम्हारी लड़की कहां है ?"

ब्राह्मणी बोली, "अभी वह सो रही है।"

पड़ोसिन बोली, "उसे उठाकर धूप में ले आओ।"

ब्राह्मणी बोली, "अभी तक नाइन नहीं आई। वही उसे उठाती है। मैं उसका मुंह सवेरे नहीं देखती। नाइन ने मना किया है। पड़ोसिन बोली, "तुम कहां इस नाइन की बातों में आ गई हो। अपनी संतान का मुंह नहीं देखोगी तो भला किसका देखोगी ! संतान के लिए पहले तो तरसती थीं और अब मुंह तक नहीं देखतीं !"

ब्राह्मणी को पड़ोसिन की बात जंच गई। उसने अपनी कन्या का मुंह उघाड़ दिया। देखती क्या है कि मुंह पर एक लाल रखा हुआ था। ब्राह्मणी नाइन और दाई की चाल समझ गई। उसने लाल ले लिया। बच्ची जग गई।

कुछ देर बाद नाइन दौड़ी-दौड़ी आई। ब्राह्मणी ने उससे कह दिया कि मैंने बच्ची को जगा लिया। नाइन अपना-सा मुह लेकर चली गई। उस दिन से ब्राह्मणी रोज लाल लेने लगी। दिन बीतते गये। बेटी अब जवान हो गई।

ब्राह्मण-ब्राह्मणी को उसके विवाह की चिंता हुई। ब्राह्मणी ने ब्राह्मण से कहा—इसके लिए ऐसा वर ढूंढो, जिसका इस दुनिया में कोई न हो। ऐसे लड़के को हम घर जमाई रख लेंगे।

ब्राह्मण वर ढूंढ़ने निकल पड़ा। चलते-चलते वह काशी पहुंचा। वहां गंगाजी के घाट पर एक लड़का नहा रहा था। ब्राह्मण ने उससे पूछा, "क्यों भई, तेरा इस दुनिया में कौन है ?"

लड़का बोला, "ऊपर आसमान और नीचे धरती, बस ये ही दो मेरे हैं।"

ब्राह्मण खुश हो गया। उसे मनचाहा वर मिल गया। वह लड़के को लेकर अपने घर आया। शुभ मुहूर्त निकालकर उसने उस लड़के के साथ लड़की का संबंध पक्का कर दिया। शादी के समय जब फेरे पड़ने लगे तो ब्राह्मणी ने दूसरे फेरे के समय वर से कहा, "जमाईजी, एक वचन दो।" जमाई ने कहा, "अच्छा, दिया।"

ब्राह्मणी ने कहा—"मेरी बेटी को सवेरे मेरे सिवा कोई न जगावे।"

दामाद ने हँसते हुए कहा, "इतनी-सी बात के लिए फेरे रोकने और वचन लेने की क्या जरूरत थी ? तुम्हीं जगाया करना।"

फेरे पड़ गये। जमाई इनके यहीं रहने लगा।

कुछ दिनों तक ब्राह्मणी की जमाई से खूब पटी, मगर बाद में उसे जमाई अखरने लगा। उसने ब्राह्मण से कहा, "यह जमाई तो बिना हाथ-पैर हिलाये पड़ा-पड़ा खाता है और तुम्हें बुढ़ापे में मेहनत करनी पड़ती है। इसे अलग कर दो, तभी इसे आटे-दाल का भाव मालूम पड़ेगा।"

ब्राह्मण ने बेटी-जमाई के लिए अलग घर की व्यवस्था कर

दी। अलग रहने पर भी वचन के अनुसार ब्राह्मणी रोज अपनी बेटी को जगाने जाती।

एक दिन दामाद अपने इष्ट-मित्रों के साथ बड़े तड़के नदी नहाने गया। राह में उसके ठोकर लग गई। उसके मुंह से सहज ही निकल गया—आज न जाने किस मनहूस का मुंह देखा जो ठोकर लग गई!

मित्रों ने उसे छेड़ा, "अपने घर में तो तू और तेरी पत्नी है। तूने अपनी पत्नी का ही मुंह देखा होगा।"

दामाद ने कहा, "मैं सवेरे अपनी पत्नी का मुंह नहीं देखता हूँ। मेरी सास ने वचन ले लिया है।"

दोस्तों को यह बात बड़ी अजीब लगी। दामाद ने उन्हें सारा किस्सा कह सुनाया। वे लोग उसका मजाक उड़ाने लगे।

ब्राह्मण युवक को उनका मजाक चुभ गया। दूसरे रोज उसने अपने वचन की परवा न कर अपनी पत्नी को जगाने के लिए मुंह उघाड़ दिया। देखता क्या है कि होटों पर लाल रखा हुआ है। अपनी सास की चालाकी अब उसकी समझ में आई। उसने लाल ले लिया और एक आले में उसे रख दिया।

कुछ देर बाद ब्राह्मणी आई। उसने अपनी बेटी को जगा हुआ देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह दामाद को वचन भग करने के लिए कोसने लगी। दामाद ने ताक में रखे लाल की ओर संकेत करके नरमाई कहा, "वह रखा है लाल। आप ले जाओ। आगे भी रोज लाल आपके पास पहुंचता रहेगा।"

ब्राह्मणी दामाद की बात सुनकर और चिढ़ गई। उसने घर आकर जल्लादों को बुलाया और उनसे कहा, "देखो, मेरा दामाद कल इतवार को नदी पर नहाने जायगा। अगर तुम उसे मारकर

उसकी आंखें लाकर मुझे दे दोगे तो मैं तुम्हें एक-एक लाल दूंगी।"

जल्लाद राजी हो गये। दूसरे दिन इतवार था। वे नदी पर पहुंचे। ब्राह्मणी का दामाद नहा-धोकर एक टीले पर ध्यान लगाये बैठा था। जल्लादों ने अवसर देखकर उसकी हत्या कर दी और उसकी आंखें लाकर ब्राह्मणी को सौंप दीं। ब्राह्मणी ने उन्हें एक-एक लाल देकर बिदा कर दिया और उन आंखों को पैरों से मसलकर मोरी में फेंक दिया।

उसी समय शंकर-पार्वती का रथ निकला। पार्वती ने ब्राह्मण युवक की लाश पड़ी देखकर रथ को रुकवा लिया। शंकर से बोलीं, "सूर्यनारायण की दी हुई कन्या का सुहाग खंडित होते मैं नहीं देख सकती। आपको इसे जिंदा करना होगा।"

शंकर को पार्वती के हठ के सामने झुकना पड़ा। उन्होंने मृग की आंखें लाकर आटे की फूंक मारी, अमृत का छींटा दिया तो वह युवक आंखें मलता उठ बैठा। उठते ही बोला, "आज तो बड़ी अच्छी नींद आई।"

पार्वती बोलीं, "ऐसी नींद तेरे वैरी-दुश्मन को भी न आवे। जा घर जा, तेरी ब्राह्मणी राह देख रही होगी।"

युवक घर पहुंचा। ब्राह्मणी प्रतीक्षा कर रही थी। बोली, "तुमने आज बड़ी देर करदी। तुम्हें मालूम है कि मैं इतवार का व्रत करती हूं, फिर भी...।"

युवक ने पत्नी को समझाते हुए कहा, "दूध-भात खाना है। अभी खाये लेता हूं।"

दूध-भात खाकर दोनों ने व्रत छोड़ा और चौपड़ बिछाकर खेलने बैठ गये। इतने में उसकी मां की भेजी दासी आई और उसने लड़की के हालचाल पूछे। बेटी को बड़ा आश्चर्य हुआ। मां ने

आजतक कभी हालचाल नहीं पुछवाया, आज क्यों दासी भेजी, उसकी कुछ समझ में नहीं आया। उसने दासी से कह दिया, "कह देना, मजे में हैं।"

दासी ने लौटकर ब्राह्मणी को यह संदेशा दे दिया। ब्राह्मणी को बड़ा अचरज हुआ। उसने सोचा, खैर, मुझसे कबतक बचेगा? दूसरा इतवार आया। उसने जल्लादों को फिर बुलाया। उनसे कहा, "आज तुम मेरे दामाद का सिर लाकर मुझे दे दोगे तो मैं तुम्हें दो-दो लाल इनाम में दूंगी।"

जल्लाद फिर नदी पर पहुंचे। ब्राह्मण युवक आज भी पहले की तरह ध्यान-मग्न था। उन्होंने चुपचाप जाकर जो तलवार मारी तो उसका सिर अलग जा गिरा। सिर लाकर उन्होंने ब्राह्मणी को दे दिया। ब्राह्मणी ने संतोष की सांस ली और उन्हें दो-दो लाल देकर बिदा किया।

इधर शंकर-पार्वती का रथ फिर निकला। पार्वती ने फिर रोक दिया और युवक को जिंदा करने की हठ ठान ली। शंकर महाराज ने कहा, "इसका सिर तो है नहीं, कैसे जिंदा करें?"

पार्वती ने कहा, "मेरे साथ आइये।"

पार्वती ने बिल्ली का रूप धारण कर लिया और शंकर महाराज को साधू बनने को कहा। सारी योजना उन्हें समझाकर वह चल दीं। शंकर महाराज साधू के वेश में ब्राह्मणी के दरवाजे पर पहुंचे और कहा—"अलख निरंजन।" ब्राह्मणी आंगन में बैठी गेहूं बीन रही थी। उसने मुट्ठीभर गेहूं उन्हें देना चाहा। शंकर महाराज ने कहा, "माई, गेहूं का हम क्या करेंगे? हमें तो आटा दो।"

ब्राह्मणी आटा लेने भीतर गई। तबतक बिल्ली के रूप मे

पार्वती आई और डलिया के नीचे से युवक के सिर को मुंह में दाबकर भाग खड़ी हुई। ब्राह्मणी की निगाह बिल्ली पर पड़ी तो वह छी-छी करती दौड़ी। मगर तबतक बिल्ली दूर निकल गई। ब्राह्मणी लोक-लाज के डर से उसका पीछा न कर सकी।

युवक का सिर आ जाने पर शंकर ने आटे की फूंक मारकर, अमृत का छींटा मार दिया। युवक आंखें मलता उठ बैठा, बोला, "वाह, आज तो खूब नींद आई।

पार्वती बोलीं, "ऐसी नींद तेरे बैरी-दुश्मन को भी न आवे। जा, घर जा।"

ब्राह्मण युवक घर पहुंचा। उसकी पत्नी राह देख रही थी। उसने खीजकर कहा, "तुम हर रविवार को देर कर देते हो!"

दोनों खा-पीकर चौपड़ खेलने बैठ गये। दासी फिर आई और उसने लौटकर ब्राह्मणी को सब हाल सुना दिया।

सुनकर ब्राह्मणी बड़ी चकराई। उसने सोचा कि हो-न-हो, बेटी जादूगरनी है।

तीसरे इतवार को फिर उसने जल्लादों को बुलवाया और कहा—आज तुम मेरे दामाद की बोटी-बोटी काटकर चारों ओर उड़ा आना। मैं तुम्हें तीन-तीन लाल दूंगी। जल्लादों ने ऐसा ही किया। ब्राह्मण युवक की बोटी-बोटी उन्होंने काटकर फेंक दी और तीन-तीन लाल लेकर चले गये।

संयोग से आज फिर शंकर-पार्वती का रथ उधर से निकला। पार्वती ने फिर उसे रोक दिया। शंकर महाराज बोले, "आज तो इसकी बोटी-बोटी उड़ा दी गई है। कैसे जीवित करें?"

पार्वती ने कहा, "कुछ भी करो। इसे जीवित करना ही

होगा।"

शंकर महाराज बोले, "लो इसकी बोटी-बोटी बीनकर लाओ।"

पार्वती चील बनकर गई और युवक की बोटी-बोटी बीनकर उन्होंने शंकर महाराज के सामने ढेर लगा दिया। शंकर महाराज ने उन हड्डी-पसलियों को जमाकर, आटे की फूंक मारी, अमृत का छींटा दिया। युवक उठ खड़ा हुआ।

पार्वती बोलीं, "हमने तेरी तीन बार रक्षा की। अब चौथे इतवार को तेरी सास तुझे घर पर ही जहर देगी। तू यह पुड़िया पहले ही खा लेना।"

शंकर-पार्वती इतना कहकर अंतर्धान हो गये। युवक घर लौटा। भोजन करके वे फिर चौपड़ बिछाकर खेलने बैठ गये। दासी आज फिर आई और लौटकर उनकी खबर दे दी। ब्राह्मणी खीज उठी। उसने सोचा—ये जल्लाद मारते भी हैं या झूठमूठ ही लाल ले जाते हैं। अब मैं ही कुछ करूंगी। देखूं, कैसे बचता है!

चौथा इतवार आया। ब्राह्मणी बड़े तड़के अपनी बेटी के घर पहुंची। बोली, "आज तुम दोनों मेरे यहां ही जीम लेना।"

बेटी ने अपनी मां से कहा, "ये नदी पर से हर इतवार को देर से आते हैं।"

ब्राह्मण युवक ने उनकी बात सुनकर कहा, "आज मैं नदी पर नहीं जाऊंगा। घर पर ही स्नान कर लूंगा। हम भोजन करने आयंगे।"

ब्राह्मणी खुश होती हुई घर पहुंची।

दोपहर को दामाद भोजन के लिए आया। ब्राह्मणी ने दामाद और ससुर की थाली परोसी। दामाद की थाली में चावल पर उसने

कुछ बुरक दिया और अपने पति की थाली के चावलों पर शक्कर डाल दी। दामाद की थाली पर धूप पड़ रही थी। ब्राह्मण ने चावलों पर कुछ हरा-हरा देखकर थालियां बदल लीं।

ब्राह्मणी यह सब देख रही थी। वह झट दौड़ी और ब्राह्मण से मना करने लगी। ब्राह्मण ने पूछा, "क्यों, क्या बात है?"

ब्राह्मणी कुछ उत्तर न दे पाई। दामाद ने मुस्कराते हुए वही थाली वापस अपने सामने खींच ली और कहा, "रहने दीजिए। इसमें घी ज्यादा है। हमारी सास इसीलिए आपको यह नहीं लेने देतीं।"

ब्राह्मण को संतोष हो गया। दामाद ने पार्वती की दी पुड़िया फांककर वह थाली साफ कर दी। भोजन करने के बाद वह अपने घर चला गया। इधर ब्राह्मणी ने जल्दी-जल्दी अपनी बेटी को भोजन कराकर घर जाने के लिए कहा। बेटी बोली, "मां, अभी तो आई हूं। थोड़ी देर बातचीत करके चली जाऊंगी।"

पर मां नहीं मानी। उसके मन में तो हलचल मची हुई थी। उसने ठेलकर बेटी को घर भेज दिया।

ब्राह्मण के लड़के का कुछ न बिगड़ा। जब यह खबर ब्राह्मणी को मिली तो वह हार मान गई। उसे विश्वास हो गया कि उसकी बेटी जरूर जादू जानती है। उसे अपने किये पर पछतावा होने लगा।

एक दिन ब्राह्मण शास्त्र पढ़ रहा था। उसमें तरह-तरह के पाप और उनके प्रायश्चित का वर्णन आया। ब्राह्मणी बैठी-बैठी सुन रही थी। वह एकाएक अपने पति से पूछ बैठी, "क्यों जी, दामाद की हत्या की कोशिश करने पर कौन-सा प्रायश्चित्त करना पड़ता है?"

ब्राह्मण चौंक पड़ा। उसने अपनी पत्नी से पूछा—"क्यों, तुझे इससे क्या करना है ?"

ब्राह्मणी बोली, "मैंने तो योंही पूछा।"

मगर ब्राह्मण न माना। उसने तो हठ ही ठान ली। वह जोर देकर ब्राह्मणी से बार-बार पूछने लगा।

ब्राह्मणी ने ब्राह्मण के पैर पकड़ लिये और सारी बात कह सुनाई। ब्राह्मण ने उसे बहुत धिक्कारा। उसने जमाई से बार-बार माफी मांगी। जमाई बड़ा भला था। उसने कह दिया—अबतक जो हुआ सो हुआ, आगे कभी ऐसा मत करना।

: ११ :

बहन की चतुराई

एक साहूकार था। उसकी सात लड़कियां थीं। एक लड़का था। लड़कियों की तो शादी हो गई थी। लड़के की रही थी। साहूकार ने उसकी भी शादी करने का विचार किया। लड़का अपनी बहनों को बुलाने गया।

सबसे पहले वह छोटी बहन के यहां पहुंचा। बहन ने कह दिया कि मैं घर का काम-काज निबटाकर जल्दी ही आ जाऊंगी।

भाई चल दिया। बहन ने सुबह जल्दी उठकर आटा पीसा और भाई के लिए रोटियां बनाकर उसके साथ रख दीं। उनमें से एक उसने अपने बच्चों के लिए रख ली। दिन निकलने पर बच्चों ने रोटी मांगी तो उसने वह रोटी उनके सामने रखी। रोटी का रंग हरा देखकर उसने वह रोटी बच्चों को नहीं खाने दी और रोटी के हरे हो जाने का कारण जांचने लगी। चक्की का पाट उठाकर उसने जो देखा तो कारण समझ में आ गया। उसमें सांप का बच्चा पिस गया था।

वह बड़ी घबराई। उसका इकलौता भाई यही रोटियां लेकर गया था। उसने खाली होंगी तो क्या होगा! यह सोचते ही वह तेजी से भाई को ढूंढ़ने भागी। भाई ज्यादा दूर तो निकला नहीं था, इसलिए उसने जल्दी ही पहुंचकर भाई से वे रोटियां ले लीं। रोटियां लेकर वह लौट रही थी कि उसे रास्ते में एक वीरान बावड़ी में कुम्हार-कुम्हारिन ढक्कन बनाते मिले। उसने पूछा, "ये ढक्कन

क्यों बना रहे हो ?"

कुम्हार ने कहा, "एक साहूकार की सात बेटियां और एक बेटा है। उस लड़के की शादी होनेवाली है। मगर सुनो, शादी के पहले ही वह लड़का मर जायगा। उसकी कई घातें हैं। उसके मां-बाप रो-रोकर मर न जायं, इसलिए हम उनके कलेजे के लिए ढक्कन बना रहे हैं।"

छोटी बहन यह बात सुनकर बड़ी हैरान हुई।

उसने कुम्हारिन से पूछा, "क्यों मां, क्या वह लड़का किसी तरह से बच नहीं सकता ?"

कुम्हारिन बोली, "बेटी, बच तो सकता है। मगर इसके लिए बड़े खटराग करने होंगे। उस लड़के की किसी बहन को पगली का स्वांग कर भाई की विपदाएं झेलनी पड़ेंगी।"

छोटी बहन ने सब बातें जान लीं और उसी क्षण से पगली की तरह चिल्लाती-गाती अपने बाप के घर की ओर चल दी। चलते-चलते जब वह घर पहुंची तो वहां शादी का श्रीगणेश हो चुका था। भाई के हल्दी चढ़ रही थी।

पगली बहन ने जिद की कि पहले मेरे हल्दी चढ़ाओ। सबको पगली की बात रखनी पड़ी। दूसरे दिन ब्याह की रस्म के अनुसार सब लोग खदान पर पीली मिट्टी लेने जाने लगे। पगली बहन ने फिर जिद की कि पहले मेरेलिए मिट्टी की खदान पर जाना होगा।

मां-बाप को पगली की जिद के सामने झुकना पड़ा। खदान पर पीली मिट्टी लेने गये तो खदान धंस गई। लोग बाल-बाल बच गये। पगली बहन ने मिट्टी का एक ढेला अपने कंधे पर टंगी थैली में डाल लिया। पगली बहन के लिए खदान की मिट्टी आ जाने

के बाद दूल्हे के लिए मिट्टी आई।

दूसरे दिन गणेश-पूजा होने लगी। पगली बहन फिर चौक पर जा बैठी। मुहूर्त के समय सात बिच्छू आये। पगली बहन सतर्क थी ही। उसने उन बिच्छुओं को मारकर अपनी थैली में डाल लिया। अब दूल्हा चौक पर बैठा।

मंडप छाया जाने लगा तो पगली बहन वहां भी पहले पहुंच गई और बांस में जहरीले कांटे पर उसकी नजर पड़ गई। उसने उसे तोड़कर अपनी थैली में रख लिया। भाई का मंडप अच्छी तरह से हो गया।

बरात रवाना होने लगी। पगली बहन दूल्हे के आगे-आगे चली। सिंह-द्वार पर बरात पहुंचते ही अचानक दरवाजा गिर गया। पगली बहन चौकन्नी थी ही, उसने सारी बरात को सचेत कर दिया। बरात बचकर निकल गई।

लग्न का समय आया तब भी पगली बहन दूल्हे के आसन पर पहले जा बैठी। लोगों ने उसे समझाया कि लड़की की लड़की से शादी कैसे की जा सकती है! मगर उसने एक न सुनी। पुरोहितों ने उसे राजी रखने के लिए मंत्रोच्चार किया। मंत्रोच्चार हो ही रहा था कि पगली बहन के गले में सुइयां आकर लगीं। उसने उन सुइयों को फौरन निकालकर थैली में डाल लिया। अपने भाई की लग्न के लिए अब उसने जगह छोड़ दी।

लग्न के बाद फेरे का समय आया। पगली बहन इस बार भी आगे हो गई। एक-एक कर सात काले नागों ने हमला किया। पगली बहन ने सबके फन कुचल दिये और उन्हें भी अपनी थैली में डाल लिया।

पलंग-फेरे के समय भी पगली बहन आगे-आगे हो ली। पलंग

क्यों बना रहे हो ?"

कुम्हार ने कहा, "एक साहूकार की सात बेटियां और एक बेटा है। उस लड़के की शादी होनेवाली है। मगर सुनो, शादी के पहले ही वह लड़का मर जायगा। उसकी कई घातें हैं। उसके मां-बाप रो-रोकर मर न जायं, इसलिए हम उनके कलेजे के लिए ढक्कन बना रहे हैं।"

छोटी बहन यह बात सुनकर बड़ी हैरान हुई।

उसने कुम्हारिन से पूछा, "क्यों मां, क्या वह लड़का किसी तरह से बच नहीं सकता ?"

कुम्हारिन बोली, "बेटी, बच तो सकता है। मगर इसके लिए बड़े खटराग करने होंगे। उस लड़के की किसी बहन को पगली का स्वांग कर भाई की विपदाएं झेलनी पड़ेंगी।"

छोटी बहन ने सब बातें जान लीं और उसी क्षण से पगली की तरह चिल्लाती-गाती अपने बाप के घर की ओर चल दी। चलते-चलते जब वह घर पहुंची तो वहां शादी का श्रीगणेश हो चुका था। भाई के हल्दी चढ़ रही थी।

पगली बहन ने जिद की कि पहले मेरे हल्दी चढ़ाओ। सबको पगली की बात रखनी पड़ी। दूसरे दिन ब्याह की रस्म के अनुसार सब लोग खदान पर पीली मिट्टी लेने जाने लगे। पगली बहन ने फिर जिद की कि पहले मेरेलिए मिट्टी की खदान पर जाना होगा।

मां-बाप को पगली की जिद के सामने झुकना पड़ा। खदान पर पीली मिट्टी लेने गये तो खदान धंस गई। लोग बाल-बाल बच गये। पगली बहन ने मिट्टी का एक ढेला अपने कंधे पर टंगी थैली में डाल लिया। पगली बहन के लिए खदान की मिट्टी आ जाने

के बाद दूल्हे के लिए मिट्टी आई।

दूसरे दिन गणेश-पूजा होने लगी। पगली बहन फिर चौक पर जा बैठी। मुहूर्त के समय सात बिच्छू आये। पगली बहन सतर्क थी ही। उसने उन बिच्छुओं को मारकर अपनी थैली में डाल लिया। अब दूल्हा चौक पर बैठा।

मंडप छाया जाने लगा तो पगली बहन वहां भी पहले पहुंच गई और बांस में जहरीले कांटे पर उसकी नजर पड़ गई। उसने उसे तोड़कर अपनी थैली में रख लिया। भाई का मंडप अच्छी तरह से हो गया।

बरात रवाना होने लगी। पगली बहन दूल्हे के आगे-आगे चली। सिंह-द्वार पर बरात पहुंचते ही अचानक दरवाजा गिर गया। पगली बहन चौकन्नी थी ही, उसने सारी बरात को सचेत कर दिया। बरात बचकर निकल गई।

लग्न का समय आया तब भी पगली बहन दूल्हे के आसन पर पहले जा बैठी। लोगों ने उसे समझाया कि लड़की की लड़की से शादी कैसे की जा सकती है! मगर उसने एक न सुनी। पुरोहितों ने उसे राजी रखने के लिए मंत्रोच्चार किया। मंत्रोच्चार हो ही रहा था कि पगली बहन के गले में सुइयां आकर लगीं। उसने उन सुइयों को फौरन निकालकर थैली में डाल लिया। अपने भाई की लग्न के लिए अब उसने जगह छोड़ दी।

लग्न के बाद फेरे का समय आया। पगली बहन इस बार भी आगे हो गई। एक-एक कर सात काले नागों ने हमला किया। पगली बहन ने सबके फन कुचल दिये और उन्हें भी अपनी थैली में डाल लिया।

पलंग-फेरे के समय भी पगली बहन आगे-आगे हो ली। पलंग

में एक शेर की तस्वीर लगी थी। अचानक वह शेर सजीव हो उठा। पगली बहन ने तत्काल उसे तलवार से मार दिया और उसका नाखून काटकर थैली में रख लिया।

उसके भाई की शादी अच्छी तरह हो गई। बरात दुलहन को लेकर घर लौट आई। पगली बहन ने अब अपना स्वांग छोड़ दिया। उसने घरभर के सामने अपनी थैली खोली। उसमें से एक-एक चीज निकाल-निकालकर उसने दिखाई और सब बातें समझाईं।

सब लोग ठगे-से उसकी ओर देखते रहे। सारी बात सुन लेने पर वे सब इस बहन की होशियारी की सराहना करने लगे। भाई तो ऐसी बहन को पाकर फूला नहीं समाया।

: १२ :

सौ-सौ रुपये की बातें

एक साहूकार था। उसके एक लड़का था। एक दिन वह लड़का अपने बाप से चारसौ रुपये लेकर देस छोड़ परदेस व्यापार के लिए निकला।

घूमते-घूमते वह एक गांव में आया। उस गांव में एक फकीर बड़े जोर-जोर से चिल्ला रहा था—सौ-सौ रुपये की बातें लो।

साहूकार के बेटे ने फकीर को अपने पास के चार सौ रुपये दे दिये। फकीर ने उसे चार बातें बताईं—१. एक से दो भले २ खाना तो देखभाल के खाना ३. सोना तो झटक-पटक के सोना ४. परदेस में किसी का भरोसा न करना।

साहूकार का बेटा इन चारों बातों को अच्छी तरह से दिल में रखकर आगे बढ़ा। चलते-चलते उसे रास्ते में एक कछुवा मिला। उसे फकीर की पहली बात याद आई—एक से दो भले। उसने कछुवे को उठा लिया।

चलते-चलते जब वह थक गया तो विश्राम करने के लिए ठंडी छांह देखकर एक पेड़ के नीचे लेट गया। कछुवे को उसने पेड़ की डाली से लटका दिया। उस पेड़ के तने में एक सांप रहता था। उस सांप की पेड़ पर बैठनेवाले कौवे से दोस्ती थी। वह कौवा किसी यात्री को पेड़ के नीचे विश्राम करते देखता तो फौरन सांप को आवाज लगाता—कांव-कांव। सांप उसकी आवाज सुनते ही बाहर निकलता और यात्री को डस लेता। रोज का उनका यही

धंधा था।

आज जब कौवे ने साहूकार के बेटे को झाड़ के नीचे विश्राम करते देखा तो फौरन आवाज लगाई—कांव-कांव !

सांप बाहर निकला। उसने साहूकार के बेटे को डस लिया। कछुवे ने अपने साथी की यह हालत देखी तो उसे बड़ा दुख हुआ। कौवा उससे थोड़ी दूर पर ही बैठा था। कछुवे ने धीरे-धीरे सरक-कर कौवे की गरदन पकड़ ली। कौवा चीखने लगा—कांव-कांव !

सांप फिर बाहर निकला। कौवे से पूछा—क्या बात है ?

कौवा बोला—भैया, मेरी जान बचा दो। इस कछुवे ने मेरी गरदन पकड़ ली है। इसके साथी मुसाफिर को फिर से जीवित कर दो।

सांप ने साहूकार के बेटे का जहर चूस लिया। वह उठ बैठा। कछुवे ने कौवे की गर्दन छोड़ दी। साहूकार के बेटे ने कहा—फकीर की पहली बात सच निकली। आज यह कछुवा संग न होता तो मेरी जान चली गई थी। सौ रुपये वसूल हो गये।

साहूकार का बेटा आगे बढ़ चला। उसे रास्ते में एक तालाब मिला। उसमें उसने कछुवे को छोड़ दिया। चलते-चलते एक गांव आया। उसमें ठग रहते थे। ठगों ने उसे दूर से ही देखकर अपना जाल फैलाया। उनमें जो सबसे चतुर था वह साहूकार के बेटे को देखते ही बोला, "ओहो जीजाजी, भले पधारे। हमने तो जबसे आपकी सुसराल छोड़ी, आपके दर्शन ही नहीं किये। आज तो हम आपको नहीं जाने देंगे। यहीं रात बितानी होगी।"

साहूकार का बेटा जाल में फंस गया। ठग उसे अपने घर ले गया, आदर से बैठाया, हाल-चाल पूछे। थोड़ी देर बाद भोजन सामने आया। साहूकार के बेटे को फकीर की दूसरी बात याद आ

गईं—खाना तो देखभाल के खाना। उसने भोजन में से कुछ हिस्सा पास ही खड़े कुत्ते के सामने फेंक दिया। भोजन में वड़ा तेज जहर मिला हुआ था। खाते ही कुत्ता मर गया। साहूकार के बेटे के कान खड़े हो गये। उसने भूख न होने का वहाना कर भोजन छोड़ दिया।

रात हुई तो साहूकार के बेटे को ठग की बड़ी बेटी सोने के कमरे में ले गई। कमरे में पलंग पर मुलायम बिस्तर बिछा हुआ था। साहूकार का बेटा उस विस्तर पर सोने ही वाला था कि उसे फकीर की तीसरी बात याद आ गई—सोना तो झटक-पटक के सोना। उसने बिस्तर झटकने के लिए उठाया। बिस्तर उठाते ही सारा रहस्य खुल गया। कच्चे सूत का पलंग एक खोह के ऊपर बिछा हुआ था। साहूकार ने फकीर का आभार माना। मौत के मुंह में से वह दो बार बच गया था।

ठग की बेटी ने साहूकार के बेटे को विभिन्न हाव-भाव से सुलाने की कोशिश की। मगर वह सोया नहीं। उसे फकीर की चौथी बात याद आई—परदेस में किसीका विश्वास मत करना। प्रलोभन होते हुए भी वह सोया नहीं। ठग की बेटी आधी रात हो जाने पर मुंह लटकाये चली गई।

आधी रात के बाद ठग की छोटी बेटी आई। वह जरा नरम दिल की थी। वह साहूकार के बेटे पर मोहित हो गई। उसने उसे सारी बात बतला दी। वह बोली—मेरे पिताजी तुम्हारी जांघ में छिपे पांचों लाल हड़पना चाहते हैं। यदि तुम्हें उनके जाल से निकलना है तो अभी चले जाओ। हमारे बाड़े में दो सांड़नियां बंधी हैं। उनमें से एक घंटे में साठ कोस जाती है, दूसरी सौ कोस। दुबली-पतली सौ कोस जाती है, तगड़ी साठ कोस। तुम बाड़े में से सौ कोसवाली सांड़नी ले आओ। हम लोग भाग चलते हैं।

साहूकार का बेटा राजी हो गया। वह सांड़नी लेने गया। पर संयोग से अंधेरे में वह भूल से साठ कोसवाली सांड़नी ले आया।

उसपर बैठकर वे दोनों चल पड़े। उजेला होने लगा तो ठग की बेटी की निगाह सांड़नी पर पड़ी। उसने कहा—तुम तो साठ कोस चलनेवाली सांड़नी ले आये। मेरा भाई हमें अभी पकड़ लेगा। चलो, जो होगा, देखा जायगा। तुम हिम्मत से काम लेना।

थोड़ी देर में ठग का बेटा आ धमका। ठग की बेटी साहूकार के बेटे से बोली, "तुम झट इस पेड़ पर चढ़ जाओ। मेरे इशारे के हिसाब से काम करना।"

साहूकार के बेटे ने यही किया। वह झट पेड़ पर चढ़ गया। ठग का बेटा जब पास आ गया तो उसकी बहन छाती पीटते हुए विलाप करने लगी, "भैया रे, तू अच्छा आ गया, नहीं तो यह मुझे भगाये लिये जा रहा था। वह देख, तुझे देखकर कैसा छिपकर बैठ गया है। तू यह सांड़नी मेरे पास छोड़ दे और इसकी गरदन उतार ला।"

ठग का बेटा बहन की बातों में आ गया। सांड़नी उसे सौंपकर वह पेड़ पर चढ़ने लगा। ठग की बेटी ने मौका देखकर साहूकार के बेटे को संकेत किया कि सौ कोसवाली सांडनी पर कूद पड़ो।

साहूकार के बेटे ने ऐसा ही किया और पलक मारते ही दोनों सौ कोसवाली सांड़नी पर सवार होकर रफू-चक्कर हो गये। ठग का बेटा मुंह देखता रह गया।

: १३ :

नमक की खेती

एक गांव में चार चोर रहते थे। वे चोरी में रोज की परेशानी और फजीहत से तंग आ गये तो उन्होंने दूसरों की देखादेखी खेती करने की ठानी। सबने सोचकर तय किया कि सबसे पहले उन्हें नमक की खेती करनी चाहिए। सो उन्होंने खेत में नमक बोया। कुछ दिनों बाद खेत में घास उग आई। चोरों ने समझा कि नमक की फसल उगने लगी। बड़े प्रसन्न हुए। बोले, "भगवान ने हम लोगों की सुन ली।"

घास पर सबेरे-सबेरे ओस की बूंदें जमी रहती थीं। इससे सारा खेत सफेद दिखाई देता था। चोर रोज सुबह खेत पर पहुंचते और खेत को सफेद देखकर फूले न समाते। आपस में एक-दूसरे की पीठ ठोंकते हुए कहते, "चोरी से तो यह धंधा बहुत अच्छा रहा। गांववालों को नमक की खेती कभी सूझी ही नहीं। अब वे हमारा लोहा मान जायंगे।"

उधर गांववाले चोरों की बातें सुनकर और रोज की इनकी लीला देखकर मन-ही-मन हँसा करते थे।

चोरों को सबेरे तो खेत सफेद दीखता, मगर जैसे ही दिन चढ़ता और ओस की बूंदें ढल जातीं, सफेदी गायब हो जाती। देखकर चोर बड़े हैरान होते। कहते, "सुबह तो फसल अच्छी दिखाई देती थी, अब एकाएक क्या हो गया?"

जब उनकी समझ में कुछ न आया तो उन्होंने खेत पर पहरा

देने की ठानी। चारों कोने पर चारों जम गये। खेत में कच्ची-घोड़ा (टिड्डा) को इधर-उधर उड़ते देखकर, उन्होंने कहा, "ये ही रोज फसल खराब कर देते हैं।"

यह सोचते ही उन्हें गुस्सा आ गया। वे बंदूकें तानकर उनके पीछे भागने लगे। दनादन गोलियां चलने लगीं। तभी कच्ची-घोड़ा उड़कर एक चोर के सीने पर जा बैठा। दूसरे चोर ने झट निशाना ताककर उसे गोली से उड़ा दिया। मगर साथ में उनका साथी भी ढेर हो गया।

अब वे लोग सिर पीटने लगे। उन्होंने खेती को हाथ जोड़ लिये। उस दिन से गांववालों में 'नमक की खेती' कहावत-सी बन गई।

: १४ :

लेड़ीलोकन बहू

एक साहूकार था। उसके सात बेटे थे। सातों बेटों की शादी हो चुकी थी। सबसे छोटे बेटे की बहू का नाम लेड़ीलोकन था। लेड़ी-लोकन बहू और उसके पति की इस घर में कोई इज्जत न थी।

लेड़ीलोकन दशा (ऋद्धि-सिद्धि) का व्रत करती थी। इस व्रत को करनेवाली को दस दिन तक वार्ता कहनी होती है। लेड़ीलोकन से भला कौन वार्ता सुनता? बेचारी ने कोई चारा न देख ढोरों का गोबर इकट्ठा करते समय उनके बांधे जानेवाले खूंटों से ही वार्ता कहना शुरु किया। उसकी जिठानियों ने एक दिन उसे इस तरह वार्ता कहते देख लिया। उन्होंने सारे घर में आग लगा दी—हाय, यह तो न जाने क्या जादू-टोना करती है! हम सबका अनिष्ट चाहती है! फिर क्या था! बेचारी लेड़ी-लोकन पर बड़ी डाट-फटकार पड़ी।

दस दिन पूरे होने पर व्रत छोड़ने की बारी आई। घी-शक्कर तो लेड़ीलोकन को इस घर में से मिल नहीं सकता था। इसलिए उसने गोबर के ही लड्डू बनाये। गुलाल, अक्षत आदि चढ़ाकर वह ढोरों के कोठे में चुपचाप दशा माता को नैवेद्य लगा रही थी कि उसकी एक जिठानी उधर आ धमकी। उसने पलभर में सारे घर को इकट्ठा कर लिया। लेड़ीलोकन को सबने झिड़का, डाटा-फटकारा। उसके पति को भी बुरा-भला कहा।

लेड़ीलोकन के पति ने रोज की इस किच-किच से तंग आकर

घर छोड़कर परदेश चल देने का फैसला किया। अपनी पत्नी से कहा कि थोड़ा-सा आटा-दाल बांध दो। लेड़ीलोकन ने घर में से जैसे-तैसे लेकर सामान बांध दिया। जब सब तैयारी होगई तो पति ने पत्नी से कहा, "मेरी चोटी गूंथ दो।" लेड़ीलोकन ने अपने लुगड़े का पल्ला फाड़कर नीर भरे नैनों से पति की चोटी गूथ दी।

लेड़ीलोकन का पति घरवालों से कुछ भी न कहकर चुपचाप चल दिया। घरवालों ने इसके लिए भी लेड़ीलोकन को ही दोषी ठहराया। सब उसे सुना-सुनाकर कहने लगे—देख तो, कैसी कुलच्छिनी है! इसका पति भी इसे छोड़कर चला गया।"

लेड़ीलोकन यह सब सुनी-अनसुनी करके अपने दिन बिताने लगी।

इधर लेड़ीलोकन के पति को जब चलते-चलते रात हो गई तो उसने एक गांव में बसेरा किया। आटा-दाल उसके पास था ही। भोजन बनाकर खा-पीकर वह आग बुझाकर पास ही ओटले पर सो गया। कुछ रात गये उस घर के मालिक ने उसे जगाया और आग न बुझाने के लिए डाटा। उसने आग बुझा दी थी, मगर वहा फिर भी अंगारे दहक रहे थे। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने उठकर आग फिर बुझा दी। कुछ रात गये घर के मालिक ने उसे फिर जगाया और आग न बुझाने के लिए फिर खरी-खोटी कही। उसने देखा, आग फिर चमक रही है। उसे इस अनोखी आग पर बड़ा अचरज हुआ। उसने गुस्से में अंगारों को हाथ से मसलना शुरू किया। वे अंगारे उसे बिल्कुल ठंडे मगर ठोस लगे। उनकी चमक बारबार मसलने पर भी नहीं मिटती थी। उसने तंग आकर उन्हें अपने पल्ले में बांध लिया। सुबह उठकर उसने जब एकांत में पल्ले

को खोलकर देखा तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही—अंगारे के बजाय वे सोने के टुकड़े निकले। भाग्य की लीला को वह सराहने लगा।

वह वहां से फौरन चल पड़ा। पास के एक नगर में पहुंचा। राजा के महल के सामने से वह निकला तो राजा के सिपाहियों ने उसे घेर लिया। वे उसे इज्जत से दरबार में ले गये। राजकुमारी से उसकी शादी कर दी और उसका राज-तिलक कर दिया। उस नगर के राजा ने मरने से पहले वसीयत की थी कि जो मेरे मरने के बाद सबसे पहले महल के सामने से गुजरे उसे राज और राजकुमारी दोनों सौंप दें। महल के सामने गुजरनेवाला वही सबसे पहला व्यक्ति था, इसलिए उसे राज और राजकुमारी दोनों मिल गये।

राजा बन जाने पर भी वह लेड़ीलोकन को नहीं भूला। रह-रहकर उसे अपनी दुखिया पत्नी की याद आती थी। उसने राज्य-भर में लेड़ीलोकन के नाम से कुएं, बावड़ी, धर्मशाला आदि बनवाई। उनपर लेड़ीलोकन का नाम लिखवा दिया।

इधर उसके घर पर भाग्य-चक्र ने ऐसा पलटा खाया कि वहां सबकुछ नष्ट हो गया। घर के सब लोग दाने-दाने के लिए मोहताज हो गये। सब लोग लेड़ीलोकन को ही इसके लिए कोसने लगे। आएदिन वे कहते कि वह न जाने क्या-क्या जादू-टोने किया करती थी। उसीने यह बेहाल किया है। लेड़ीलोकन खून के घूंट पीकर रह जाती। पर मन-ही-मन कुढ़ने के सिवा वह कर ही क्या सकती थी!

इनसब लोगों की हालत जब बहुत बिगड़ गई तो ये देस छोड़कर परदेस निकले। संयोग से चलते-चलते लेड़ीलोकन के पति के राज में ही आये। वहां जगह-जगह कुएं, बावड़ी और धर्म

शालाओं पर लेड़ीलोकन का नाम लिखा देखकर वे अपने साथ की अभागी लेड़ीलोकन को ताने मारने लगे—देखो तो, एक यह लेडी-लोकन है और दूसरी है यह !

लेड़ीलोकन अपने भाग्य को कोसती हुई सबकुछ सहे जा रही थी। चलते-चलते इनका काफिला राजा के महल के सामने से निकला। राजा झरोखे में बैठा हुआ था। वह इन्हे पहचान गया। इनकी यह हालत देखकर उसे बड़ा दुख हुआ। उसने नौकर-चाकरों को भेजकर इन्हें बुलवाया। ये लोग आये तो इनसे पूछा—नौकरी करोगे ?

मुसीबत में पड़े बाप और भाइयों ने हाथ जोड़कर कहा, "हां, महाराज, नौकरी के लिए तो निकले ही हैं !"

राजा ने अपने बाप को अन्नक्षेत्र के बंटवारे पर बैठा दिया। मां को घी-दूध की निगरानी पर रख दिया। भाई-भौजाइयों को चूने-मिट्टी के काम पर लगा दिया। लेड़ीलोकन को गोबर इकट्ठा करने का काम सौंपा गया। ये सब लोग लेड़ीलोकन की हँसी उड़ाने लगे—इस गोबरांदी को यहां भी यही काम मिला। लेड़ीलोकन तो ताने, हँसी-मजाक सब सहने की आदी थी ही। उसने चुपचाप यह भी सह लिया।

राजा ने महल के पास ही इन्हें ठहरा दिया। एक दिन चांदनी रात में सब बहुएं खेल-कूद रही थीं। राजा झरोखे में से चुपचाप सब देख रहा था। खेलने-कूदने के बाद सब एक जगह बैठ गई और अपने-अपने मन की इच्छा बतलाने लगीं।

किसीने कीमती गहने की इच्छा बताई तो किसीने कीमती कपड़ों की। सबकी करीब-करीब ऐसी ही इच्छाएं थीं। सब अपनी इच्छा कह चुकीं तो उन्हें लेड़ीलोकन से ठठोली करने

की सूझी। वह एक तरफ बैठी हुई इन्हें खेलते-कूदते देख रही थी। ये सब उसका हाथ पकड़कर उसे अपने बीच मे ले आईं। बोलीं, "तुम भी तो अपने मन की कहो।"

लेड़ीलोकन बोली—"मैं क्या कहूं!"

वे सब उसके पीछे पड़ गईं। उसे बताने के लिए मजबूर करने लगीं। लेड़ीलोकन डरते-डरते बोली, "तुम मुझे मारोगी तो नहीं?"

वे बोलीं—"मारेंगी क्यों?"

लेड़ीलोकन बोली, "मेरे मन में तो ऐसा आता है कि मैं झूले पर बैठी होऊं। बच्चा मेरी गोद में हो। गले में मोतियों की माला हो। बच्चा खेलते-खेलते मोतियों की माला तोड़ दे। दौरानी-जिठानियां दौड़कर मोतियों को बीनने लगें। मैं . . ."

लेड़ीलोकन आगे न बोल सकी। उसकी जिठानियां हँसते-हँसते लोटपोट हो गईं। वे उसे चिमटियां लेती हुई बोलीं, "जरा इस गोबरांदी की इच्छा तो देखो!"

लेड़ीलोकन ने क्षमा-सी मांगते हुए कहा, "मैं तो पहले ही सुनाना नहीं चाहती थी।"

राजा छज्जे पर बैठा-बैठा यह सब देख रहा था। दूसरे दिन मां जब काम पर आई तो उसने कहा, "मुझे नहलाने-धुलाने के लिए एक दासी की जरूरत है। तुम अपनी गोबर पाथनेवाली बहू को इस काम के लिए छोड़ जाओ।"

मां राजा की बात सुनकर अचरज में पड़ गई। राजा से वह इंकार कैसे कर सकती थी! उसने डरते-डरते कहा, "इसका आदमी इसे छोड़ गया है। इसलिए मैं इसपर विश्वास नहीं कर सकती। आप दूसरी बहू को बुलालें।"

शालाओं पर लेड़ीलोकन का नाम लिखा देखकर वे अपने साथ की अभागी लेड़ीलोकन को ताने मारने लगे—देखो तो, एक यह लेडी-लोकन है और दूसरी है यह !

लेड़ीलोकन अपने भाग्य को कोसती हुई सबकुछ सहे जा रही थी.। चलते-चलते इनका काफिला राजा के महल के सामने से निकला । राजा झरोखे में बैठा हुआ था। वह इन्हें पहचान गया । इनकी यह हालत देखकर उसे बड़ा दुख हुआ । उसने नौकर-चाकरों को भेजकर इन्हें बुलवाया । ये लोग आये तो इनसे पूछा—नौकरी करोगे ?

मुसीबत में पड़े बाप और भाइयों ने हाथ जोड़कर कहा, "हां, महाराज, नौकरी के लिए तो निकले ही हैं !"

राजा ने अपने बाप को अन्नक्षेत्र के बंटवारे पर बैठा दिया । मां को घी-दूध की निगरानी पर रख दिया । भाई-भौजाइयों को चूने-मिट्टी के काम पर लगा दिया । लेड़ीलोकन को गोबर इकट्ठा करने का काम सौंपा गया। ये सब लोग लेड़ीलोकन की हँसी उड़ाने लगे—इस गोबरांदी को यहां भी यही काम मिला । लेड़ीलोकन तो ताने, हँसी-मजाक सब सहने की आदी थी ही । उसने चुपचाप यह भी सह लिया ।

राजा ने महल के पास ही इन्हें ठहरा दिया । एक दिन चांदनी रात में सब बहुएं खेल-कूद रही थी । राजा झरोखे में से चुपचाप सब देख रहा था । खेलने-कूदने के बाद सब एक जगह बैठ गई और अपने-अपने मन की इच्छा बतलाने लगीं ।

किसीने कीमती गहने की इच्छा बताई तो किसीने कीमती कपड़ों की । सबकी करीब-करीब ऐसी ही इच्छाएं थी । सब अपनी इच्छा कह चुकी तो उन्हें लेड़ीलोकन से ठठोली करने

की सूझी । वह एक तरफ बैठी हुई इन्हें खेलते-कूदते देख रही थी। ये सब उसका हाथ पकड़कर उसे अपने बीच में ले आईं। बोलीं, "तुम भी तो अपने मन की कहो।"

लेड़ीलोकन बोली—"मैं क्या कहूं!"

वे सब उसके पीछे पड़ गईं। उसे बताने के लिए मजबूर करने लगीं। लेड़ीलोकन डरते-डरते बोली, "तुम मुझे मारोगी तो नहीं?"

वे बोलीं—"मारेंगी क्यों?"

लेड़ीलोकन बोली, "मेरे मन में तो ऐसा आता है कि मैं झूले पर बैठी होऊं। बच्चा मेरी गोद में हो। गले में मोतियों की माला हो। बच्चा खेलते-खेलते मोतियों की माला तोड़ दे। दौरानी-जिठानियां दौड़कर मोतियों को बीनने लगें। मैं . . ."

लेड़ीलोकन आगे न बोल सकी। उसकी जिठानियां हँसते-हँसते लोटपोट हो गईं। वे उसे चिमटियां लेती हुई बोलीं, "जरा इस गोबरांदी की इच्छा तो देखो!"

लेड़ीलोकन ने क्षमा-सी मांगते हुए कहा, "मैं तो पहले ही सुनाना नहीं चाहती थी।"

राजा छज्जे पर बैठा-बैठा यह सब देख रहा था। दूसरे दिन मां जब काम पर आई तो उसने कहा, "मुझे नहलाने-धुलाने के लिए एक दासी की जरूरत है। तुम अपनी गोबर पाथनेवाली बहू को इस काम के लिए छोड़ जाओ।"

मां राजा की बात सुनकर अचरज में पड़ गई। राजा से वह इंकार कैसे कर सकती थी! उसने डरते-डरते कहा, "इसका आदमी इसे छोड़ गया है। इसलिए मैं इसपर विश्वास नहीं कर सकती। आप दूसरी बहू को बुलालें।"

मगर राजा ने उसीके लिए हठ किया। आखिर मां नौकरी का खयालकर लेड़ीलोकन को महल में छोड़ गई। अपने डेरे पर जाकर उसने जब सारा हाल सुनाया तो लेड़ीलोकन की जिठानियां बोलीं, "वह तो है ही कुलच्छिनी। अच्छी होती तो उसका आदमी ही उसे क्यों छोड़कर चुपचाप चला जाता।...चलो, अच्छा हुआ। बला टली।"

राजा ने लेड़ीलोकन से नहलाने के लिए कहा। लेड़ीलोकन कांपती राजा की चोटी खोलने लगी। चोटी में उसे अपने लुगड़े की चिंदी जैसी ही चिंदी दिखाई दी। उसे अपने पति के परदेस जाने का दिन याद आ गया। उसकी आंखों में आंसू छलछलाने लगे। दो-एक आंसू की बूंदें राजा की पीठ पर टपक पड़ीं। राजा ने लेड़ीलोकन से पूछा, "क्यों, क्या बात है?"

लेड़ीलोकन ने आंसू पोंछते हुए कहा, "कुछ नहीं, महाराज।"

राजा ने हठ करते हुए कहा, "नहीं बताओ, क्या बात है? तुम रोईं क्यों?"

लेड़ीलोकन डरते-डरते बोली, "महाराज, कैसे कहूं? मेरे पति जब परदेस गये थे तो मैंने भी ऐसी ही एक चिंदी उनकी चोटी में गूंथ दी थी।...मगर महाराज आप बुरा न मानें। यह तो..."

राजा ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं बुरा नहीं मानता। मगर यह तो कहो, तुम अपने पति को पहचानती भी हो?"

लेड़ीलोकन राजा की बात समझी नहीं। राजा फिर बोले, 'तुम्हारे पति तुम्हारे सामने आ जायं तो तुम उन्हें पहचान लोगी?"

लेड़ीलोकन राजा की बात सुनकर आश्चर्य-चकित रह गई। राजा को हो क्या गया है! कैसी बातें करते हैं!

राजा ने फिर कहा, "तुम अपने पति को भूल गईं, क्यों ?"

लेड़ीलोकन ने पहली बार निगाह ऊंचीकर ध्यान से राजा को देखा। अब राजा की बात उसकी समझ में आई। उसने अपने पति को राजा के रूप में पाने की कभी कल्पना भी न की थी। उसे जब विश्वास हो गया कि ये राजा ही उसके पति हैं तो उसकी आंखों से प्यार के आंसू बहने लगे।

राजा ने लेड़ीलोकन को अपने रनिवास में रख लिया। डेरे पर जब यह खबर पहुंची तो वे सब उसे जी भरकर कोसने लगे।

कुछ दिनों बाद लेड़ीलोकन के लड़का पैदा हुआ। अपने पुत्र की वर्षगांठ पर राजा ने चौरासी जात निमंत्रित कीं। अपने मां-बाप, भाई-भौजाइयों को भी बुलवाया।

सब लोगों के इकट्ठे होने पर रनिवास में लेड़ीलोकन को सजा-धजाकर झूले पर बिठाया गया। उसकी गोद में राजकुमार दे दिया गया। संयोग से बच्चे ने मां के गले मे पड़ी मोतियों की माला तोड़ डाली। लेड़ीलोकन की जिठानियां तो पुरानी बात को भूल गई थी। वे मोती बीनने दौड़ीं। मोती बीनकर उन्होंने झट हार पिरोकर लेड़ीलोकन के गले में डाल दिया। लेड़ीलोकन ने उन सबको उस रात की इच्छा के अनुसार गहने और कपड़े भेंट किये।

राजा ने बढ़िया-से-बढ़िया भोजन से चौरासी जात का सत्कार किया। आखिर में वे स्वयं नीम की चटनी परोसने आये। परोसने के बाद उन्होंने सबसे पूछा कि खाना कैसा लगा। सबने भोजन की तारीफ की। नीम की चटनी का रहस्य किसीकी समझ

में न आया। इतना अच्छा भोजन कराकर राजा ने सबका मुंह आखिर में कड़वा क्यों कर दिया? राजा ने जब चटनी का स्वाद पूछा तो एक मंत्री ने डरते-डरते कहा, "महाराज, यह तो कड़वी है।"

राजा ने अपने मां-बाप की ओर संकेत कर कहा, "इसी चटनी की तरह मैं और मेरी पत्नी मेरे मां-बाप को कड़वे लगते थे। इसी कड़वेपन ने आपके भोजन की तरह हमारे घर का बुरा हाल कर दिया।"

राजा के मां-बाप, भाई-भौजाई सबने अब राजा को पहचान लिया। वे अपने किये पर पछताने लगे। राजा ने उन्हें समझाया—अब पछताने से क्या फायदा? इस घटना से सबक लो। अपने घर में किसीसे भेद न करो, नहीं तो इस चटनी की तरह घर की हवा कड़वी हो जायगी।

उस दिन से लेड़ीलोकन अपने सास-ससुर, भाई-भौजाई सबकी आंखों का तारा बनकर सबके साथ चैन से रहने लगी।

: १५ :

"जम्बू ने ऐसी करी"

किसी गांव में एक ब्राह्मण रहता था। उसके एक बेटा था। उस बेटे की बहू जानवरों की बोली समझती थी।

एक रोज वह अपने घर में सोई हुई थी कि आधी रात के समय सियारों की 'हुआ-हुआ' आवाज आई। उसकी नींद खुल गई। वह पड़ी-पड़ी कुछ देर तक सुनती रही, फिर एकाएक दरवाजा खोलकर घर से चल दी।

उसका पति भी पड़ा-पड़ा जग रहा था। उसने अपनी पत्नी को इस तरह आधी रात के समय चुपचाप घर से बाहर जाते देखा तो उसे बड़ा अचरज हुआ। वह भी उठकर दबे पांव उसके पीछे हो लिया।

चलते-चलते स्त्री नदी किनारे पहुंची। धारा में एक मुर्दा बहकर आ रहा था। उसे उसने पकड़ लिया और उसकी जांघ पर दांत गड़ाने लगी। उसके पति ने जब यह देखा तो उसे विश्वास हो गया कि यह डायन है। वह उल्टे पैरों लौट आया।

घर आकर उसने अपने पिता से सब हाल कह सुनाया। दोनों ने तय किया कि सवेरे उसे ले जाकर पीहर छोड़ आयंगे।

सवेरे उठकर ससुर बहू को लेकर चल दिये। चलते-चलते थक गये तो रास्ते में एक पेड़ के नीचे थोड़ी देर सुस्ताने के लिए रुक गये। उस पेड़ पर बैठा एक कौवा 'कांव-कांव' करने लगा। बहू ने एक ठंडी सांस भरकर उसकी ओर देखते हुए कहा—

कछु करनी, कछु करम गत, कछू पुरवले पाप।
जम्बू ने ऐसी करी, अब तू का करिहे काग ?

बहू की बात ससुर की समझ में नहीं आई। उन्होंने पूछा, "बेटी, यह तुमने क्या कहा ?"

बहू बोली, "पिताजी, मैं जानवरों की बोली समझती हूं। यह कौवा कह रहा है कि सामने इस पेड़ के नीचे लाखों रुपये का माल है। इसकी जड़ में यदि कोई तेल गरम करके डाल दे तो इसके भीतर रहनेवाला नाग मर जायगा और वह धन उस आदमी को मिल जायगा।"

ससुर ने कहा, "बेटी, यह कैसे मान लें कि तेरी बात सच निकलेगी ?"

बहू बोली, "हाथ कंगन को आरसी क्या ! ले आइए तेल गरम करके और कर लीजिए जांच।"

ससुर ने कहा, "अच्छा।" वे पड़ोस के नगर से तेल ले आये। उसे गरम करके दोनों ने मिलकर उस पेड़ की जड़ में डाल दिया। उसके भीतर रहनेवाला नाग मर गया। ससुर ने जड़ को खोदा तो उसके भीतर से लाखों रुपये का सोना निकला।

ससुर ने बहू से कहा "बेटी, अभी की तो तेरी बात सच निकली। अब तू यह बता कि रात को तू नदी के किनारे क्यों गई थी और मुर्दे को तूने मुंह से क्यों फाड़ा था ?"

बहू बोली, "पिताजी, रात को सियारों की आवाज सुनकर मैं गई थी। उन्होंने कहा था कि एक मुर्दा बहता आ रहा है। उसकी जांघ में पांच कीमती लाल हैं। यह सुनते ही मैं दौड़ी-दौड़ी चली गई थी। जल्दी-जल्दी में छुरी-चाकू ले जाना भूल गई। इसीलिए मुर्दे की जांघ को मुंह से चीरना पड़ा। यह देखिये वे पांच लाल, जो

उसकी जांघ से निकले।

बहू ने इतना कहकर वे पांचों लाल अपने पल्ले से खोल कर वहां रख दिये। ससुर को अपनी बहू पर अब कोई संदेह न रहा। वे बहू को लेकर घर वापस लौट आये और ऐसी बुद्धिमान बहू पाकर अपने भाग्य की सराहना करने लगे।

: १६ :

सूर्यनारायण ने डोंड़ी पिटवाई

सूर्यनारायण तो देवलोक में रहते थे, किंतु उनकी मां और पत्नी दोनों इसी लोक में रहती थीं। सूर्यनारायण खर्च भेजते थे, जिससे दोनों का काम जैसे-तैसे चलता था।

इस तंगी से छुटकारा पाने के लिए सूर्यनारायण की मां ने एक चाल चली। उसने कुम्हार से एक ऐसी हांडी बनवाई जिसमे दो मुह थे। इस तरह यह हांडी एक होते हुए भी दो का काम देती थी।

इसी अनोखी हांडी में सूर्यनारायण की मां एक ओर खीर बना लेती थी और दूसरी ओर राबड़ी।[1] खीर तो खुद खा लेती और राबड़ी बहू को खिला देती। इस तरह वह खुद तो खूब तदुरुस्त बनी हुई थी, पर बहू दिनों-दिन सूखती जा रही थी।

एक बार सूर्यनारायण को अपने घर की सुध आई। वे घर लौटे। उनकी मां ने उस दिन भी उसी हांडी में खीर और राबड़ी बनाई। खीर अपने और अपने बेटे के सामने परोस ली, राबड़ी रोज की तरह बहू को परोस दी। सूर्यनारायण ने खीर की बड़ी प्रशंसा की। उनकी पत्नी को खीर का नाम सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे अपने पति की बात समझ में नहीं आई। एकांत में मिलने पर पत्नी ने पति से पूछा, "आज खीर कहां बनी थी, जो आप उसकी इतनी प्रशंसा कर रहे थे? आज तो राबड़ी बनी थी।"

सूर्यनारायण को पत्नी की बात सुनकर बड़ा अचरज हुआ।

---

[1] आटे को पानी में चुड़ाकर बनाई जाती है।

उन्होंने मन में सोचा कि जरूर कुछ-न-कुछ गड़बड़ है।

दूसरे दिन फिर सब खाने बैठे। मां ने एक ही हांडी में से सबको परोसा। सूर्यनारायण ने अपनी और अपनी पत्नी की थाली को ध्यान से देखा तो उन्हें अंतर दिखाई दिया। उन्होंने उठकर हांडी को देखा तो सब रहस्य खुल गया। मां सिटपिटा गई। उन्होंने मां से इसका कारण पूछा। मां ने कुम्हार को इसके लिए दोषी बनाया।

सूर्यनारायण को बड़ा पश्चाताप हुआ, बोले, "मां, घर-घर बहुओं की यही हालत होगी ?"

मां ने सिर झुका लिया। सूर्यनारायण ने अपने राज्य में डोंड़ी पिटवा दी कि जो कोई ऐसी दो मुंह की हांडी बनायेगा उसे कठोर दंड दिया जायगा।

: १७ :

तीन प्रश्न

एक भाई ने अपनी बहन को बहुत दिनों से देखा नहीं था, इसलिए वह उससे मिलने के लिए उसकी ससुराल गया। भाई बेहद गरीब था और बहन संयोग से एक अमीर से ब्याह दी गई थी। भाई को देखकर बहन का जी भर आया। वह पीहर के हाल-चाल जानने के लिए बेचैन हो उठी। किंतु प्रयत्न करने पर भी दोनों एकांत में नहीं मिल सके। इसलिए बहन के सामने बड़ी बिकट परिस्थिति पैदा हो गई। सबके सामने पीहर के हाल-चाल पूछकर वह अपने पीहर की हँसी नहीं उड़वाना चाहती थी। उसका स्वाभिमान उसे ऐसा नहीं करने दे रहा था। साथ-ही-साथ पीहर के समाचार जाने बिना भी उससे रहा नहीं जा रहा था। आखिर सोच-समझकर चतुराई से उसने रास्ता निकाल ही लिया।

उसने भाई से एक के बाद एक तीन प्रश्न किये। ये प्रश्न देखने में बड़े सीधे-सादे और पीहर के गौरव को बढानेवाले थे। किंतु अपने सांकेतिक अर्थ में वे भाई से पीहर की वास्तविक स्थिति जानने के लिए किये गए थे।

भाई भी बहन की इस चतुराई को ताड़ गया।

बहन ने अपने पुराने दिन याद करते हुए पहला सवाल किया, "आंगण मोर चुगेरे दादा ?"

इसका शाब्दिक अर्थ था, "क्यों भैया, क्या अपने आंगन

में अभी भी मोर चुगते हैं ?"

यह प्रश्न इस सरल अर्थ में पीहर के वैभव को प्रदर्शित करता था, किंतु भाई के लिए इसका सांकेतिक अर्थ था, "क्या अपने घर में बच्चे-बच्ची अभी भी मोर की तरह दाने चुगा करते हैं ?"

रोटी बनाकर खिलाते, इतने दाने बेचारे के यहां थे कहां ? इसलिए अनाज के दाने आंगन म बखेर दिय जाते थे और घर के मोर—बच्चे—उन्हें चुगकर पेट भर लेते थे।

भाई ने प्रश्न के इस भीतरी अर्थ को समझकर उत्तर दे दिया, "हां वो जीजी।"

बहन ने दूसरा प्रश्न किया, "डूंगर दीवो बलेरे दादा ?"

प्रश्न का ऊपरी अर्थ था, "क्यों भैया, अभी भी अपने यहां डूंगर पर दिये जलते हैं न ?"

इस सरल अर्थ में यह प्रश्न पीहर की अमीरी की ओर संकेत करता था। डूंगर पर का दीया उसके पीहर के कारोबार की अधिकता और फैलाव को बतलाता था।

इसके विपरीत गहरे अर्थ में इस प्रश्न का भाव था—

क्या अभी भी दीये का काम डूंगर पर की लकड़ियों के उजाले से ही चलाया जाता है ?

भाई इस भीतरी अर्थ को समझ गया। उसने पहले की ही तरह उत्तर दिया, "हां वो जीजी।"

अब बहन ने तीसरा प्रश्न किया, "भाभी घूघर माल रे दादा ?"

इसका भी सरल अर्थ था, "क्यों भैया, क्या भाभी अभी भी घूघरों की माला की तरह गहनों से सजी फिरती है ?"

इस सरल अर्थ में यह प्रश्न घर की अमीरी में चार चांद लगा रहा था।

किंतु भाई के लिए अंदरूनी अर्थ था—क्या भाभी अभी भी वही चीथड़े पहनती है, भैया, जिनके जगह-जगह से फट जाने के कारण भाभी को लाज बचाने के लिए कपड़े में गठान-पर-गठान लगानी पड़ती हैं? ऐसी गठानों की माला ही मानो भाभी है। यह गठानों की माला घूघर माल से मिलती-जुलती है।

भाई ने बहन के इशारे को समझकर सर नीचा कर कह दिया, "हां वो जीजी!"

: १८ :

पुण्य की जड़ पाताल में

एक राजा थे। वह बड़े दानी थे। उनके दरवाजे से कोई खाली हाथ नहीं लौटता था।

एक दिन उनके द्वार पर एक साधु आया। साधु ने आवाज लगाई, "दाता, कुछ मिल जाय।"

महाराज ने भंडार में से साधु महाराज को अपनी इच्छानुसार ले लेने की आज्ञा दे दी। साधु ने गरदन हिलाते हुए कहा, "दाता, तेरे भंडार में से हम कुछ भी नहीं लेंगे। यह हमारे लिए त्याज्य है। तू तो हमें अपनी मेहनत की कमाई का दे।"

महाराज भेस बदलकर मेहनत करने निकले। एक लुहार के यहां दिनभर घन ठोका। लुहार ने शाम को चार पैसे उनकी हथेली पर रख दिये। महाराज खुशी-खुशी उन चार पैसों को लेकर उन महात्मा के पास पहुंचे। महात्मा ने उन पैसों को ले लिया।

महात्मा ठहरे विरागी, वह पैसों का क्या करें? उन्होंने उन पैसों को एक ओर फेंक दिया।

कुछ दिनों बाद वहां एक पेड़ उग आया। उस पेड़ में खूब पैसे-रुपये लगे। सारी प्रजा रुपये-पैसे पेड़ में से तोड़-तोड़कर ले गई, मगर पेड़ फिर भी रुपये-पैसों से लदा ही रहा।

राजा के पास भी इस पेड़ की खबर गई। राजा का मन

डोल गया। उन्होंने सोचा कि ऐसा पेड़ तो अपने बाग में होना चाहिए। वे नौकर-चाकरों के साथ उस अनोखे पेड़ के पास पहुंचे और पेड़ को उखाड़ने का हुक्म दिया। नौकर-चाकरों ने खूब मेहनत की, मगर वह पेड़ उनसे हिला तक नहीं। राजा मदद के लिए बढ़े।

इतने में वे साधु महाराज वहां आ पहुंचे। उन्होंने राजा से कहा, "राजन्, यह पेड़ नहीं उखड़ सकता। इसकी जड़ पाताल में है। पसीने में यही खूबी है।"

: १९ :

कुंवर कायला

एक राजा था। एक दिन वह बड़े तड़के अपने महल के झरोखे में बैठा हुआ था। महल के सामने झाड़ू लगाने एक मेहतरानी आई। उसकी निगाह राजा पर पड़ी तो उसने मुंह फेरकर थूक दिया। राजा को बड़ा अचरज हुआ। उसने नौकरों को भेजकर उस मेहतरानी को बुलवाया। मेहतरानी डरती-कांपती आई। राजा ने उससे पूछा, "तूने मुझे देखकर क्यों थूका?"

मेहतरानी ने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुए कहा, "महाराज, भूल होगई। माफ करें।"

राजा ने कहा, "माफ तो किया, मगर तुझे थूकने का कारण बतलाना ही होगा।"

मेहतरानी बोली, "सरकार, नाराज न हों। बात असल में यह है कि आपके कोई औलाद नहीं है। सबेरे-सवेरे निपूते का मुंह देख लेने से दिन बड़ा बुरा कटता है।"

राजा को मेहतरानी की बात सुनकर बड़ा दुःख हुआ। वह हैरान होकर राज-पाट सब छोड़कर जंगल में चला गया।

वहां भटकते-भटकते एक दिन राजा को एक महात्मा मिले। उन्होंने उससे भटकने का कारण पूछा। राजा ने अपनी व्यथा बतलाई। सुनकर महात्मा को राजा पर दया आगई। उन्होंने उसे एक फल दिया और कहा, "इसे रानी को खिला देना। नौ महीने बाद तेरे यहां कन्या होगी। उस कन्या का आठ बरस के पहले ही

ब्याह कर देना, नहीं तो वह कुंवारी रह जायगी।"

राजा फल लेकर खुश होता हुआ घर लौटा और वह फल रानी को खिला दिया। रानी ने ठीक नौ महीने के बाद एक सुंदर कन्या को जन्म दिया। इस कन्या का नाम उन्होंने राजल रखा। राजा और रानी राजल को बड़ा प्यार करते। लाड़ में महात्मा की दूसरी बात की उन्हें सुध ही न रही। राजल चंद्रकला की तरह बढ़ने लगी। एक दिन राजा दरबार में बैठा हुआ था। राजल छज्जे में आकर खड़ी होगई। सारे दरबारी उधर ही देखने लगे। राजा ने तत्काल दरबार खत्म कर दिया। उसे आज पता लगा कि बेटी जवान होगई है।

राजा ने फौरन नाई को बुलवाया और राजल के लिए योग्य वर ढूंढ़ने की आज्ञा दी। नाई चल पड़ा। राजल ने नाई को राह मे रोककर अपने नाप के कपड़े देते हुए कहा, "इस नाप के कपडे जिसके शरीर में बैठ जायं, उसे ही मेरेलिए पसंद करना। एक बात का और ध्यान रखना। मेरी ही तरह वह भी अपने मां-बाप की इकलौती औलाद हो।"

नाई राजल के दिये कपड़ों को लेकर वर की तलाश में देश-देश घूमने लगा। कहीं कपड़े ठीक बैठ जाते तो इकलौता बेटा नही निकलता था। कही इकलौता बेटा निकल आता तो कपड़े ठीक न बैठते। नाई ढूंढ़-ढूंढ़कर परेशान हो गया।

अचानक एक दिन रास्ते में उसे दूसरा नाई मिला। राम-राम के बाद दोनों ने एक-दूसरे के हाल-चाल पूछे। बात-बात में इस नाई को पता लगा कि वह दूसरा नाई अपने राजा के कुंवर काचला के लिए कन्या ढूंढ़ने निकला है। कुंवर काचला की भी शर्तें ठीक राजल की जैसी ही थीं। यह मालूम होते ही दोनों ने अपने पास के कपडे

मिलाये। बिल्कुल ठीक बैठे। दोनों ने खुशी-खुशी संबंध पक्का कर लिया। अपने-अपने देश पहुंचकर दोनों ने इस संबंध की खबर दी। ब्याह की तिथि तय होगई और तैयारियां होने लगीं।

राजल की दूर के रिश्ते की एक भाभी थी। राजल का कुंवर काचला से संबंध पक्का होना इस भाभी को अच्छा नहीं लगा, क्योंकि उसके भाई के एक लड़की थी। उसकी एक आंख में फूला था, इसलिए सब उसे 'फूलादे' कहते थे। वह अपनी इस फूलादे का संबंध कुंवर काचला से करना चाहती थी। इसीलिए उसने सोचा कि राजल और कुंवर काचला का संबंध तुड़वाना चाहिए। उसने राजल से रोज कहना शुरू किया—"बाईजी, तुम ने क्या जानकर कुंवर काचला से ब्याह करना मंजूर किया है?"

राजल क्या जवाब देती, लेकिन रोज-रोज यही बात भाभी के मुंह से सुनते-सुनते वह तंग आगई। उसने एक दिन भाभी से पूछा, "क्यों, क्या हुआ? क्या तुमने कुंवर को देखा है?"

भाभी ने मुस्कराकर कहा, "देखा क्या, वह तो पनघट पर रोज आता है।"

राजल ने शरमाते हुए कहा, "अच्छा, तो एक बार मुझे भी उसकी झांकी दिखला देना, भाभी।"

भाभी तो इसी अवसर की ताक में थी ही। वह बोली, "चलो, अभी चलो।"

वह राजल को कुएं के पास ले गई। राजल ने आस-पास देखते हुए पूछा, "यहां कहां हैं कुंवर?"

भाभी ने मुस्कराते हुए कुएं में तैरते कछुवे की ओर इशारा कर दिया। राजल ने अचरज से पूछा, "क्या मतलब?"

भाभी उसी तरह मुस्कराती हुई बोली, "यही हैं तुम्हारे कुंवर काचला।"

राजल जैसे आसमान से धरती पर आ गिरी। घबराकर बोली, "क्या तुम सच कहती हो?"

भाभी ने दबी आवाज में कहा, "सच, बाईजी। झूठ बोलकर मुझे क्या लेना-देना। उस नाई ने तुम्हें धोखा दिया है।"

राजल इस चोट को न सह सकी। उसके मनसूबे मिट्टी में मिल गये। बालों को बिखेर, चूड़ियों को फोड़, पागल की तरह रोती-गाती घर की ओर भागी। रास्ते में कुम्हार का घर पड़ा। वह कुम्हार से बोली—

कुमारया तुई म्हारो वीर !
म्हारा रे ब्याव की चंवरी[1] मती घड़।

आगे चलकर महल के सामने बाजे वजते दिखाई दिये। वह बाजेवालों से बोली—

बाजंतरी तुई म्हारो वीर !
म्हारा रे ब्याव का बाजा मती बजा।

घर में बुआ आदि स्त्रियां कामण[2] गा रही थीं। वह उनसे बोली—

भुवा वई तुई म्हारी भुवा !
म्हारा रे ब्याव फार कामण मती गा।

ब्याह का सारा काम इस तरह रुकवाकर राजल पागलों की भांति कभी हँसती तो कभी रोती हुई गाने लगी—

---

[1] मटकियां। [2] दूल्हे को वश में करने के लिए गाये जानेवाले गीत।

पाड़ा सरीखो रथ रो जीव,
कादो पीये, बेलू भकसे
रुग रुग चले कुंवर काचला ।

(—पाड़े सरीखा उनका शरीर है । कंजी पीते हैं और रेती खाते हैं । रुग-रुग चाल से कुंवर काचला चलते हैं ।)

इधर यों आग लगाकर राजल की भाभी ने कुंवर काचला को कहलवाया कि राजल सब जगह तुम्हारी बुराई करती फिरती है । विश्वास न हो तो अपनी आंखों से देख जाओ, कानों से सुन जाओ ।

यह संदेशा मिलते ही कुंवर काचला ने सात एक-से घोड़े कसवाये और अपने छः साथियों को अपने ही जैसी पोशाक पहनवाकर अपने साथ लिया । सातों राजल के देश आये । चंपा बाग में डेरा डाला । केसर-कस्तूरी की महक सारे नगर में फैल गई । राजल को भी सुगंध आई । उसने अपनी दासी से कहा—

दासी छोरी, डब्बो संभाल ।
डब्बारी केसर भंवरा लई गया ।

दासी असलियत समझ गई । बोली—

नी लई गया बई केसर भंवरा ।
परणवा तो आया कुंवर काचला ।
डेरा तो दिया चम्पा बाग में ।

राजल को दासी की बात पर विश्वास नहीं आया । वह गाने लगी—

पाड़ा सरीखो रथ रो जीव
कादो पीये, बेलू भकसे,
रुग रुग चले कुंवर काचला ।

दासी ने बार-बार राजल से कहा कि सच मानों, कुंवर काचला आये हैं, वह ऐसे नहीं हैं। विश्वास न हो तो चंपा बाग में चलो।

बड़ी मुश्किल से राजल राजी हुई। गीत गाती हुई वह दासी के साथ चंपा बाग पहुंची। वहां सातों को एक-जैसी पोशाक में देखकर वह चकराई। उसने पूछा—

सब साथी पचरंगी पाग,
सब घोड़े घूघर माल
म्हने रे ओलखाव कुंवर काचला ?

कुंवर काचला के एक साथी ने राजल को जवाब दिया—

सब साथ्यां ने पचरंगी पाग,
कुंवर काचला ने सोहन से हरो।
सब घोड़े घूघर माल
कुंवर ना घोड़े सोहन सांकलो।

इतना कहते ही सातों ने अपने-अपने घोड़ों को एड़ मारी और देखते-ही-देखते गायब होगये। जाते-जाते कुंवर राजल से कह गया, "मैं तो पाड़े-सा हूं। काई और रेती खाता हूं। रग-रग चलता हूं। फिर भला मुझे देखने क्यों आई ?"

राजल कुछ कहे, इसके पहले ही कुंवर और उसके साथी हवा हो गये। राजल सिर थामकर बैठ गई। उसे आज दूसरी बार चोट लगी। यह चोट पहले की चोट से भी गहरी थी। यह अपमान उसे खल गया। उसने सोचा—ऐसे जीने से क्या फायदा। यह सोचकर उसने अपने हाथों से चिता बनाई। चिता में बैठकर आग लगाने से पहले उसने सोचा कि उसके बलिदान की बात दूसरों को मालूम हो जानी चाहिए, इसलिए उसने अपनी रतनजड़ी चोली उतारकर पास के पेड़ पर टांग दी। फिर अपने ही हाथों

चिता में आग लगा ली। देखते-ही-देखते वह राख की ढेरी बन गई।

उधर कुंवर काचला ने फूलादे से व्याह कर लिया। मगर जब राजल के बलिदान की खबर उसके पास पहुंची तो उसकी आंखें खुल गईं। उसे अपनी भूल मालूम हुई। राजल का असली रूप अब उसके सामने आया। वह अपने किये पर पछताने लगा। सिर धुनता हुआ वह अपने साथियों को लेकर वहीं चंपा बाग मे वापस आया और राजल की राख में लोटने लगा। सामने पेड़ पर राजल की चोली टंगी थी। उसके हीरे-मोती जैसे उसकी हँसी उड़ाने लगे। कुंवर को यह अखरा। वह उन्हें डांटने लगा—

लीली दरियाई रो तू कांच!
थारा में को होमो तो बली मच्यो।
तू कई जियो गंवार ?

हीरे-मोतियों ने जवाब दिया—

लीली दरियाई रो हूं कांच।
थारा भरोसे राजल बलो मरी।
तू कई जियो गंवार ?

कुंवर कोई जवाब न दे सका। उसने तत्काल कटार निकालकर अपने कलेजे में भौंक ली। उसके साथियों ने भी वैसा ही किया। सातों वहीं ढेर होगये।

तभी उधर से शंकर-पार्वती का रथ निकला। पार्वती ने रथ की रास थाम ली। शंकर से बोलीं, "स्वामी, इन सबको जिलाना होगा।"

शंकर बोले, "यह तो मृत्युलोक है। यहां पग-पग पर ऐसे दृश्य देखने को मिलेंगे। हम किस-किसको जीवित करेंगे ?"

मगर पार्वती ने हठ ठान ली। लाचार होकर शंकर को उन

की बात माननी पड़ी। उन्होंने आटे की चिमटी की फूंक मारी और अमृत के छींटे दिये। झट राजल, कुंवर काचला और उसके साथी जीवित हो गये।

कुंवर ठाठ-बाट से राजल को व्याहकर अपने देस ले गया। फूलादे को उसने गोण में भरकर, उसका मुंह बंद करके, उसके घर पहुंचा दिया।

: २० :

राब की करामात

एक जमाईजी थे। वह बड़े संकोची स्वभाव के थे। एक बार वह अपनी ससुराल गये। वहांपर वह बात-बात पर झेंपने लगे। झेंपू तो पहले ही से थे, ससुराल होने के कारण 'करेला और नीम चढ़ा' वाली हालत होगई।

भोजन करने बैठे तो इच्छा होते हुए भी हर चीज के लिए इंकार करने लगे। उनकी साली राब[1] परोसने आई तो उन्होंने अपनी आदत के अनुसार इंकार कर दिया।

संयोग से राब की एक बूंद उनकी पत्तल पर गिर गई। उन्होंने उसे चाटा तो बड़ी अच्छी लगी। उनकी इच्छा हुई कि कोई उन्हें राब परोस दे, पर झेंपू स्वभाव के कारण मांगें तो कैसे? उनकी इच्छा मन-की-मन में ही रह गई।

मगर राब की उस एक बूंद ने उन्हें तड़पा दिया। उसका स्वाद हर घड़ी जीभ पर अनुभव होने लगा। वह राब पाने की जुगत सोचने लगे। रात को जब सब जने सो गये तो उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा कि राब की मटकी कहां रखी है। पत्नी ने पास के कमरे में छींके पर टंगी मटकी की ओर इशारा कर दिया। जमाईजी की बांछें खिल गईं। वह दबे पांव छीके के पास पहुंचे।

मगर ठिगने कद के होने के कारण छींके पर उनका हाथ नहीं पहुंचा। अचानक उनकी निगाह कोने में रखी लकड़ी पर

---

[1] गन्ने के रस को उबालकर बनाया गया पदार्थ।

पड़ गई। उन्होंने लकड़ी से मटकी के पेंदे में छेद कर दिया। उस छेद में से राब चूने लगी। उन्होंने अपना मुंह फाड़ दिया।

इस तरह उन्होंने भरपेट राव खाई, लेकिन मटकी में से राब का टपकना फिर भी जारी रहा। वह बड़े घबराये। राब के नशे मे उन्होंने मटकी में छेद तो कर दिया था, मगर अब क्या हो ? छेद बंद करने का उन्हें कोई रास्ता ही नहीं सूझता था। अगर राब को फर्श पर गिरने दिया जाय तो सबेरे घर में नाहक होहल्ला मचेगा। लाचार जमाईजी मटकी के नीचे खड़े रहे और राब उनके शरीर पर टपकती रही। सारी मटकी खाली हो गई तब कहीं वह हटे।

अब जमाईजी के सामने समस्या आई कि देह और कपड़ों को कैसे साफ करें। इतनी रात को स्नान करने से भंडाफोड़ होने का डर था। इसलिए उन्होंने पास के कमरे में रखी कपास से ही बदन को पोंछना शुरू किया, लेकिन राव चिपकनी होने के कारण कपास उनके बदन से लिपट गई। ज्यों-ज्यों वह राव छुड़ाने की कोशिश करते, कपास उनके शरीर से और चिपकती। होते-होते उनका सारा शरीर कपास से ढक गया। वह बड़े अजीब से प्राणी बन गये। उन्हें इस हालत में देखकर शायद ही कोई पहचानता। अब तो वह और भी घबराये। करें तो क्या करें ? राब ने बड़ी उलझन में डाल दिया। घर के लोगों के जग जाने का डर अलग सता रहा था। अगर उन्हें ऐसा भूत बना किसीने देख लिया तो क्या कहेगा !

बेचारे को जब कुछ नहीं सूझा तो वह कपास के ढेर से अलग हो गये और दबे पांव बचते हुए ढोरों के कोठे की ओर बढ़े। सदर दरवाजे से तो बाहर निकलना मुमकिन नहीं था, इसलिए वह इस

रास्ते पर आये। मगर दुर्भाग्य ने यहां भी उनका पीछा न छोड़ा। ढोरों के कोठे में पैर रखा ही था कि किसीके बोलने की आवाज उसके कानों में पड़ी। उनकी जान सूख गई। डर लगा कि शायद घर के लोग जग गये। वह सांस रोककर मन-ही-मन भगवान को याद करने लगे। मगर भगवान भी शायद आज उनसे रूठ गया था। बातों की फुसफुसाहट और पैरों की आहट पास ही आती जा रही थी। और कोई चारा न देख वह दुबककर भेड़-बकरियों के झुण्ड में छुपकर बैठ गये। सारा शरीर सफेद होने के कारण वह उन्हींमें से एक लगने लगे।

ढोरों के कोठे में जिनकी बातों की और पैरों की आवाज सुनाई दी थी, वे चोर थे। उन्होंने देवी की मानता मानी थी कि अगर आज चोरी में गहरा हाथ लगा तो वे एक भेड़ की बलि देंगे। संयोग से देवी ने उनकी मनोकामना पूरी कर दी। खूब माल हाथ लगा। इसीलिए वे एक भेड़ की तलाश में आये थे। कोठे में आकर अच्छी मोटी-ताजी भेड़ की तलाश करने लगे। अकस्मात् उनकी निगाह भेड़ों के बीच दुबके जमाईजी पर पड़ी और वह उन्हें अपनी पसंद की भेड़ समझ बैठे। सारे कोठे में वही उनकी आंखों में चढ़ गये। उन्होंने फौरन उस मोटी-ताजी भेड़ को बोरे में भर लिया और कंधों पर लादकर ले चले। जमाईजी की जान सूखी जा रही थी। कुछ कहते तो प्राण जाने का डर था। इसलिए बेचारे पानी में बहते तिनके की तरह लाचार रहे। मन-ही-मन राब को कोस रहे थे—इस सत्यानासी ने मुझे कितनी कठिनाई में डाल दिया।

चोर चलते-चलते देवी के मंदिर में पहुंचे। यहां वे बोझ को कंधे से उतारने लगे तो जमाईजी से नहीं रहा गया। वह बोल पड़े,

पड़ गई। उन्होंने लकड़ी स मटकी के पेंदे में छेद कर दिया। उस छेद में से राब चूने लगी। उन्होंने अपना मुंह फाड़ दिया।

इस तरह उन्होंने भरपेट राव खाई, लेकिन मटकी में से राब का टपकना फिर भी जारी रहा। वह बड़े घबराये। राब के नशे मे उन्होंने मटकी में छेद तो कर दिया था, मगर अव क्या हो ? छेद बंद करने का उन्हें कोई रास्ता ही नहीं सूझता था। अगर राब को फर्श पर गिरने दिया जाय तो सबेरे घर में नाहक होहल्ला मचेगा। लाचार जमाईजी मटकी के नीचे खड़े रहे और राब उनके शरीर पर टपकती रही। सारी मटकी खाली हो गई तब कहीं वह हटे।

अब जमाईजी के सामने समस्या आई कि देह और कपड़ों को कैसे साफ करें। इतनी रात को स्नान करने से भंडाफोड़ होने का डर था। इसलिए उन्होंने पास के कमरे में रखी कपास से ही बदन को पोंछना शुरू किया, लेकिन राब चिपकनी होने के कारण कपास उनके बदन से लिपट गई। ज्यों-ज्यों वह राब छुड़ाने की कोशिश करते, कपास उनके शरीर से और चिपकती। होते-होते उनका सारा शरीर कपास से ढक गया। वह बड़े अजीब से प्राणी बन गये। उन्हें इस हालत में देखकर शायद ही कोई पहचानता। अब तो वह और भी घबराये। करें तो क्या करें ? राब ने बड़ी उलझन में डाल दिया। घर के लोगों के जग जाने का डर अलग सता रहा था। अगर उन्हें ऐसा भूत बना किसीने देख लिया तो क्या कहेगा !

बेचारे को जब कुछ नहीं सूझा तो वह कपास के ढेर से अलग हो गये और दबे पांव बचते हुए ढोरों के कोठे की ओर बढ़े। सदर दरवाजे से तो बाहर निकलना मुमकिन नहीं था, इसलिए वह इस

रास्ते पर आये। मगर दुर्भाग्य ने यहां भी उनका पीछा न छोड़ा। ढोरों के कोठे में पैर रखा ही था कि किसीके बोलने की आवाज उसके कानों में पड़ी। उनकी जान सूख गई। डर लगा कि शायद घर के लोग जग गये। वह सांस रोककर मन-ही-मन भगवान को याद करने लगे। मगर भगवान भी शायद आज उनसे रूठ गया था। बातों की फुसफुसाहट और पैरों की आहट पास ही आती जा रही थी। और कोई चारा न देख वह दुबककर भेड़-बकरियों के झुण्ड में छुपकर बैठ गये। सारा शरीर सफेद होने के कारण वह उन्हींमें से एक लगने लगे।

ढोरों के कोठे में जिनकी बातों की और पैरों की आवाज सुनाई दी थी, वे चोर थे। उन्होंने देवी की मानता मानी थी कि अगर आज चोरी में गहरा हाथ लगा तो वे एक भेड़ की बलि देंगे। संयोग से देवी ने उनकी मनोकामना पूरी कर दी। खूब माल हाथ लगा। इसीलिए वे एक भेड़ की तलाश में आये थे। कोठे में आकर अच्छी मोटी-ताजी भेड़ की तलाश करने लगे। अकस्मात् उनकी निगाह भेड़ों के बीच दुबके जमाईजी पर पड़ी और वह उन्हें अपनी पसंद की भेड़ समझ बैठे। सारे कोठे में वही उनकी आंखों में चढ़ गये। उन्होंने फौरन उस मोटी-ताजी भेड़ को बोरे में भर लिया और कंधों पर लादकर ले चले। जमाईजी की जान सूखी जा रही थी। कुछ कहते तो प्राण जाने का डर था। इसलिए बेचारे पानी में बहते तिनके की तरह लाचार रहे। मन-ही-मन राब को कोस रहे थे—इस सत्यानासी ने मुझे कितनी कठिनाई में डाल दिया।

चोर चलते-चलते देवी के मंदिर में पहुंचे। यहां वे बोझ के

 लग तो जमाइजी स नही रहा गया नह बोल पड

"भैया, जरा धीरे-से बोरी उतारना।"

चोर बोरी में से इस आवाज को सुनकर बड़े चकराये। उन्होंने सोचा कि यह क्या बला सिर पड़ी। घबराहट में बिना कुछ सोचे-समझे वे सिर पर पैर रखकर भाग खड़े हुए। जाते समय वे अपना चोरी का धन भी ले जाना भूल गये।

जमाईजी देवी को याद करते हुए बोरी में से निकले। देवी ने उनकी जान बचाई, इसलिए उन्होंने उसका आभार माना। फिर उन्होंने पास ही बहती नदी में स्नान किया। राब और कपास को बदन से छुड़ाकर चोरों का सारा माल-मता लेकर सवेरा होने के पहले ही ससुराल पहुंच गये और सारा माल उन्होंने अपनी पत्नी के हाथ में रख दिया। पत्नी इतना सारा धन देखकर अचरज में रह गई। जमाईजी ने हँसते हुए कहा, "यह सब तेरी राब की करामात है।"

: २१ :

'ऊखलीधर'

एक किसान था। एक दिन वह अपने खेत में बक्खर चला रहा था कि उधर से एक महात्मा निकले। उन्होंने किसान से कहा, "भैया, कुछ भिक्षा मिलेगी ?"

किसान बोला, "महाराज, मैं कुछ दे तो दूंगा, मगर मुझे कुछ ऐसी तरकीब बताओ, जिससे मेरे खेत में मानो बीघा धान हो। मैं गरीबी के मारे परेशान हूं।"

महात्मा बोले, "भैया, तू मुरलीधर का नाम लिया कर। वही दाता है। वह जो चाहे सो दे सकता है।"

किसान भोला था। बोला, "महाराज, मुरलीधर का नाम लेने से क्या मेरी इच्छा पूरी हो जायगी ?"

महात्मा ने कहा, "जरूर। उसके हाथ में सबकुछ है। तू प्रेम से उसका नाम जप। तेरी मनोकामना पूरी होगी।"

उसी समय से किसान महात्मा के बताये अनुसार मुरलीधर का जप करने लगा। बक्खर चल रहा था, साथ में जप भी चलने लगा।

दोपहर के समय किसान की स्त्री उसके लिए रोटी लेकर आई। किसान ने उससे कहा, "मैं रोटी कैसे खाऊं ? मेरा जप खंडित हो जायगा।"

किसान की स्त्री ने कहा, "अरे, इसमें क्या बात है। तुम रोटी खाओ, तबतक मैं तुम्हारी ओर से जप करती हूं।"

किसान को यह बात जंच गई। वह रोटी खाने बैठ गया और किसान की पत्नी मुरलीधर का जप करने लगी। जप करते-करते स्त्री का ध्यान घर की ओर गया। ऊखल में वह धान कूटते-कूटते छोड़ आई थी। कुत्ते धान को कहीं खा न जायं, यह चिंता उसे सताने लगी। इसी चिंता में वह मुरलीधर को तो भूल गई और लगी 'ऊखलीधर' कहने। किसान भोजन करके निबटा तो वह भी स्त्री की देखा-देखी 'ऊखलीधर' ही जपने लगा।

भगवान ने यह सुना तो इस अनोखे नाम—ऊखलीधर—से स्मरण करने के कारण वह उस किसान पर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने लक्ष्मीजी से कहा, "देखा, यह मेरा सच्चा भक्त है। इस नाम से मुझे किसीने आजतक याद नहीं किया। माता यशोदा ने मुझे कृष्णावतार में ऊखल से बांधा था। उसी घटना को लेकर इस भक्त ने मेरा यह नामकरण किया है।"

लक्ष्मीजी बोलीं, "चलो, तुम्हारे भक्त की परीक्षा लें।"

भगवान ने लक्ष्मीजी से कहा, "परीक्षा लेना बेकार है। वह तो सच्चा भक्त है।"

मगर लक्ष्मीजी नहीं मानीं। भगवान को उनके साथ आना ही पड़ा। वे किसान के खेत से थोड़ी दूरी पर ही एक छापरे[1] में बैठ गये और लक्ष्मीजी से बोले, "जाओ, तुम परीक्षा ले आओ। मैं यहीं बैठा हूं।"

लक्ष्मीजी एक मामूली स्त्री का रूप धरकर किसान के बक्खर के सामने जा खड़ी हुईं। किसान एक स्त्री को अपने रास्ते में रुकावट डालते देखकर बोला, "अरे लच्छिमी, एक तरफ हो जा।"

---

[1] छोटे नाले।

लक्ष्मीजी किसान का लोहा मान गईं। मन-ही-मन कहने लगीं कि देखो, इस छिपे रूप में भी यह मुझे पहचान गया। उन्होंने आगे परीक्षा लेने के लिए किसान से पूछा, "मेरे पति कहां हैं?"

किसान काम में बाधा पड़ने के कारण खिन्न हो रहा था। लक्ष्मीजी के इस सवाल से वह चिढ़ गया। उसने पिंड छुड़ाने के लिए पास के छापरे की ओर सहज ही संकेत कर दिया। लक्ष्मीजी की रही-सही शंका भी दूर होगई। वह दौड़ती हुई भगवान के पास आईं, बोलीं, "सचमुच यह खरा भक्त है।"

भगवान बोले, "मैंने तो पहले ही कहा था।"

लक्ष्मीजी ने कहा, "खैर, इसे अब कुछ-न-कुछ देना चाहिए।"

भगवान बोले, "चलो।"

एक साधारण पुरुष का रूप बनाकर भगवान लक्ष्मीजी के साथ चले। किसान ने इन्हें आते देखा तो वह और खीजा। उसने मन-ही-मन में कहा, "पहले तो यह स्त्री अकेली आई थी, अब दो हो गये। ये मुझे काम नहीं करने देंगे।"

इतने में भगवान ने उसके पास आकर कहा, "हम तुझसे बहुत प्रसन्न हैं। जो मांगना हो, मांग।"

किसान चिढ़ा हुआ तो था ही। बोला, "मुझे मानी बीघा धान चाहिए। दोगे?"

भगवान बोले, "ऐसा ही हो।"

किसान बोला, "ठहरो, मैं तुम्हारी बात का कैसे भरोसा कर लूं? अगर इतना धान न हुआ तो मैं इसी निघवण[1] से तुम्हें ठीक कर दूंगा।"

---

[1] बक्खर की ऊपर की मूठ।

किसान को यह बात जंच गई। वह रोटी खाने बैठ गया और किसान की पत्नी मुरलीधर का जप करने लगी। जप करते-करते स्त्री का ध्यान घर की ओर गया। ऊखल में वह धान कूटते-कूटते छोड़ आई थी। कुत्ते धान को कहीं खा न जायं, यह चिंता उसे सताने लगी। इसी चिंता में वह मुरलीधर को तो भूल गई और लगी 'ऊखलीधर' कहने। किसान भोजन करके निबटा तो वह भी स्त्री की देखा-देखी 'ऊखलीधर' ही जपने लगा।

भगवान ने यह सुना तो इस अनोखे नाम—ऊखलीधर—से स्मरण करने के कारण वह उस किसान पर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने लक्ष्मीजी से कहा, "देखा, यह मेरा सच्चा भक्त है। इस नाम से मुझे किसीने आजतक याद नहीं किया। माता यशोदा ने मुझे कृष्णावतार में ऊखल से बांधा था। उसी घटना को लेकर इस भक्त ने मेरा यह नामकरण किया है।"

लक्ष्मीजी बोलीं, "चलो, तुम्हारे भक्त की परीक्षा लें।"

भगवान ने लक्ष्मीजी से कहा, "परीक्षा लेना बेकार है। वह तो सच्चा भक्त है।"

मगर लक्ष्मीजी नहीं मानीं। भगवान को उनके साथ आना ही पड़ा। वे किसान के खेत से थोड़ी दूरी पर ही एक छापरे[1] में बैठ गये और लक्ष्मीजी से बोले, "जाओ, तुम परीक्षा ले आओ। मैं यहीं बैठा हूं।"

लक्ष्मीजी एक मामूली स्त्री का रूप धरकर किसान के बक्खर के सामने जा खड़ी हुई। किसान एक स्त्री को अपने रास्ते में रुकावट डालते देखकर बोला, "अरे लच्छिमी, एक तरफ हो जा।"

---

[1] छोटे नाले।

लक्ष्मीजी किसान का लोहा मान गईं। मन-ही-मन कहने लगीं कि देखो, इस छिपे रूप में भी यह मुझे पहचान गया। उन्होंने आगे परीक्षा लेने के लिए किसान से पूछा, "मेरे पति कहां हैं ?"

किसान काम में बाधा पड़ने के कारण खिन्न हो रहा था। लक्ष्मीजी के इस सवाल से वह चिढ़ गया। उसने पिंड छुड़ाने के लिए पास के छापरे की ओर सहज ही संकेत कर दिया। लक्ष्मीजी की रही-सही शंका भी दूर होगई। वह दौड़ती हुईं भगवान के पास आईं, बोलीं, "सचमुच यह खरा भक्त है।"

भगवान बोले, "मैंने तो पहले ही कहा था।"

लक्ष्मीजी ने कहा, "खैर, इसे अब कुछ-न-कुछ देना चाहिए।"

भगवान बोले, "चलो।"

एक साधारण पुरुष का रूप बनाकर भगवान लक्ष्मीजी के साथ चले। किसान ने इन्हें आते देखा तो वह और खीजा। उसने मन-ही-मन में कहा, "पहले तो यह स्त्री अकेली आई थी, अब दो हो गये। ये मुझे काम नहीं करने देंगे।"

इतने में भगवान ने उसके पास आकर कहा, "हम तुझसे बहुत प्रसन्न हैं। जो मांगना हो, मांग।"

किसान चिढ़ा हुआ तो था ही। बोला, "मुझे मानी बीघा धान चाहिए। दोगे ?"

भगवान बोले, "ऐसा ही हो।"

किसान बोला, "ठहरो, मैं तुम्हारी बात का कैसे भरोसा कर लूं ? अगर इतना धान न हुआ तो मैं इसी निगवण[1] से तुम्हें ठीक कर दूंगा।"

---

[1] बक्खर की ऊपर की मूंठ।

भगवान किसान के भोलेपन पर प्रसन्न होते हुए बोले, "तुम्हें जिसपर विश्वास हो उसे बुला लो।"

किसान ने उनकी यह बात मान ली। वह दौड़ा-दौड़ा उन्हीं महात्मा की कुटिया पर गया और उन्हें लिवा लाया। महात्मा ने भगवान को लक्ष्मीसहित देखकर दंडवत प्रणाम किया और पूछा, "भगवन, मैंने इतनी तपस्या की, पर आपने मुझे कभी दर्शन नहीं दिये? लेकिन इस गंवार के लिए आप दौड़े आये?"

भगवान ने कहा, "बात यह है कि इसका हृदय बालक की तरह निर्मल है। जो मुझे पवित्र हृदय से प्रेमपूर्वक याद करता है, वहां मैं खिंचा चला आता हूं।"

इतना कहकर भगवान लक्ष्मीसहित अंतर्धान हो गये।

: २२ :

भाई-बहन

किसी गांव में एक ब्राह्मण-ब्राह्मणी रहते थे। उनके एक लड़का और एक लड़की थी। उनके दिन चैन से बीतते थे। किंतु भाग्य को यह मंजूर न हुआ। एकाएक ब्राह्मणी की मृत्यु होगई। लड़की का वह ब्याह भी न कर पाई।

जब लड़की के ब्याह का समय आया तो वह अपने पिता से बोली, "पिताजी, दूल्हे को पड़छेगा[1] कौन? मेरे लिए तो तुम नई मा लाओ।"

ब्राह्मण बड़े सोच में पड़ गया, पर बेटी न मानी। आखिर उसे बेटी की हठ पूरी करनी पड़ी। जैसे-तैसे उसने एक विधवा से पुनर्विवाह कर लिया। विधवा अपने साथ एक लड़की लेकर आई। ब्राह्मण की बेटी ने इस नई मां और उसकी बेटी दोनों का स्वागत किया। घर का सारा काम-काज वह पहले की तरह ही करती रही, बल्कि अपनी इस नई मां को उसने उठकर पानी भी नहीं पीने दिया। होते-होते नई मां बड़ी ही आलसिन बन गई। वह दिन-रात पड़ी रहती और ऊपर से ब्राह्मण की बेटी पर टर्राया करती। सौतेली मां की बेटी भी मां की देखा-देखी उसपर रौब जमाने लगी।

ब्राह्मण की बेटी काम से तो नहीं घबराई, मगर सौतेली मां और उसकी बेटी का हर घड़ी का तेज बोलना उसे खलने लगा।

---

[1] विवाह की एक रस्म

उसने अपने बाप को समझाने की कोशिश की। मगर बाप ने उसकी बातों पर कान नहीं दिया, उलटा उसे ही डांटने लगा। असल में नई स्त्री का जादू उसपर चढ़ चुका था। उसके बहकावे में आकर वह अपने बेटे और बेटी की ओर जरा भी ध्यान नही देता था।

बाप के इस तरह बदल जाने से दोनों भाई-बहन पर सौतेली मा के अत्याचार और बढ़ गये। वह झूठी-झूठी शिकायतें करके बाप के रोज कान भरने लगी। बाप का मन इन दोनों की ओर से दिनोंदिन फिरता ही गया। घर में रोज चख-चख रहने लगी।

एक दिन ब्राह्मण बाहर से फेरी लगाकर लौटा। आते ही उसने हाथ-पैर धोने के लिए पानी मांगा तो उसकी स्त्री ने कह दिया कि तुम्हारी बेटी ने आज पानी भरा ही नहीं। बेटी ने जब इस बात को झूठी सिद्ध करने का प्रयत्न किया तो सौतेली मा ने दूसरी शिकायत कर दी—यह मेरी छोकरी को मारती है।

ब्राह्मण आएदिन की इन शिकायतों से तंग आ गया था। आज वह क्रोध के मारे अंधा हो उठा। उसने बच्चे और बच्ची को उठाकर कुएं में फेंक दिया।

लड़की बड़ी थी, इसलिए बच गई और कुएं में से बाहर निकल आई। मगर उसका भाई पानी में डूबकर मर गया।

मरने के बाद वह मेंढक बनकर उसी कुएं में रहने लगा उसकी सगी बहन जब कुएं पर पानी भरने आती तो वह उसकी गगरी चढ़ा देता, मगर जब उसकी सौतेली बहन आती तो वह उसकी गगरी फोड़ देता। सौतेली बहन इस मेंढक के मारे परेशान होगई। उसने अपनी मां से शिकायत की।

मां रूठकर बैठ गई। ब्राह्मण जब फेरी लगाकर आया तो

उसने रूठने का कारण पूछा। उसने मेंढक की करतूत कह सुनाई। ब्राह्मण अपनी स्त्री को मनाने के लिए तत्काल बंदूक लेकर कुएं पर गया और उसने मेंढक को गोली से उड़ा दिया।

मरने के बाद मेंढक ने तोते की योनि में जन्म पाया। अब भी वह पहले की तरह व्यवहार करने लगा। सब लड़कियां जब बाग में झूलने आतीं तो वह अपनी सगी बहन के पास पहुंचकर उसे झुलाता। लेकिन सौतेली बहन के झूले को काट देता।

इस बार फिर ब्राह्मण तक शिकायत पहुंची। ब्राह्मण ने इस तोते को भी गोली से उड़ा दिया।

तोते की योनि समाप्त होने के बाद उसने निपूते राजा के यहां बालक के रूप में जन्म लिया। पैदा होते ही वह रोने लगा। उसका रोना किसी तरह बंद ही न होता था। राजा-रानी हरचंद कोशिश करके थक गये। अकस्मात ब्राह्मण की लड़की छाछ लेने के लिए महल में आई। उसने कुंवर को उठाया तो वह चुप होगया। राजा-रानी की जान-में-जान आई।

मगर जैसे ही ब्राह्मण की बेटी कुंवर को लिटाकर जाने लगी तो वह फिर रोने लगा। रानी ने उससे ठहरने के लिए कहा। ब्राह्मण की बेटी ने कुंवर को गोदी में ले लिया और गीत गाने लगी—

हलोरे नाना, झलोरे नाना !
एक बाप का दो भई-बेन,
बेटी का लग्न आया
बेटी ने बाप से कियो—
दादाजी तम दूसरो बयाव करो,
म्हारा लगन कुण झेलेगा ?
चुपको रईजा, घानो रईजा

म्हारा माड़ी जाया बीर
नातरा वाली ने कुवा में नरवाया
बेन तो निकली अई ने भई डेंडको हुवो
म्हारी मटकी तो माथा पे धरी दे
ने बेन की मटकी फोड़ी दे
बाप ने बंदूक से फोड़यो
तो तोतो वणी ग्यो
चुपको रईजा, कानो रईजा
म्हारा माड़ी जाया बीर
सावण मेनो आयो, तोतो बाग में गयो
बाग में तो झूला बांध्या
म्हारे तो झूलादे, ने बेण को झूलो काटी
फिर बाप खे कियो
बंदूक मारी तोता खे मारी दियो
बांझा-बांझी घरे जनम लियो
बेन को तो ब्याव आयो
चुपको रईजा, कानो रईजा
म्हारा माड़ी जाया बीर

इस गीत में उसने अपनी ही रामकहानी कही
हुआ तो उसने कुंवर को पालने में लिटा दिय
रोया। जब वह घर जाने लगी तो रानी ने
। गीत की दर्दभरी कहानी को सुनकर उ
ा। उन्होंने उसे बेटी की तरह अपने यहां रख
मालूम होन पर उन्होन उसकी सौतली म

: २३ :

टपका

एक गांव के बाहर कुम्हार की टूटी-फूटी झोंपड़ी थी। कुम्हार अपने घरवालों के साथ जैसे-तैसे उसीमें अपनी गुजर कर रहा था।

एक रोज की बात कि खूब जोर की बारिश हुई। कुम्हार की टूटी-फूटी झोंपड़ी जगह-जगह से चूने लगी। कहीं बैठने तक को जगह न रही। कुम्हार का छोटा बेटा इस हड़बड़ाहट में जग गया। कच्ची नींद में जग जाने के कारण वह रोने लगा। कुम्हार बच्चे को इधर-उधर की बातें करके बहलाने लगा। मगर बच्चे का रोना बंद न हुआ। रात का समय और बारिश होने के कारण वह उसे कहीं बाहर भी नहीं ले जा सकता था। कुम्हार को जब और कुछ न सूझा तो उसने बच्चे से कहा, "हमारी पहेली बूझोगे?"

पहेली का नाम सुनते ही बच्चे का रोना बंद हो गया। बाप ने बेटे से कहा, "पूछूं?"

बच्चे ने 'हां' सूचक गरदन हिला दी। बाप ने कहना शुरू किया, "मैं किसी चीज से नहीं डरता। बस एक चीज से डरता हूं। बताओ, वह कौन-सी चीज है?"

बच्चा तनकर बैठ गया और जिन चीजों से वह खुद डरता था, उनके नाम गिनाने लगा। बोला, "बिच्छू से डरते हो? सांप से डरते हो?"

बाप ने गरदन हिलाते हुए कहा, "नहीं?" बच्चे ने दूसरी

डरावनी चीजों के नाम गिनाते हुए कहा, "अच्छा तो शेर से तो डरते ही होगे, . . . चीते से ? . . . गेंडे से ? . . . हाथी से ?"

मगर बाप ने हर बार गरदन हिलाते हुए कह दिया, "ऊं-हूं।"

बच्चे ने कुछ सोचकर कहा, "अच्छा भूत से डरते हो ? . . . चुड़ैल से ? . . . डायन से ? . . . प्रेत से ? . . . राक्षस से ? किसीसे भी नहीं डरते ? तो फिर चोर-डाकू से डरते होगे ?"

बच्चे ने समझा कि उसने अब अपने पिताजी को छका दिया। वह खुशी से ताली पीटने लगा, मगर उसके पिता ने उसे इस बार भी निराश कर दिया। उन्होंने पहले की ही तरह इस बार भी गरदन हिलाकर कहा, "इसमें से किसीसे भी नही।"

बच्चा हैरान हो गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर उसके पिताजी डरते किस चीज से हैं।

बाप ने बेटे को मुंह लटकाये बैठे देखा तो उसकी हिम्मत बढ़ाने के लिए कहा, "अरे, मैं जिस चीज से डरता हूं वह तो यही मौजूद है। जरा सोच।"

मगर इतना इशारा मिल जाने पर भी बेटा बाप की पहेली को हल न कर सका। बाप ने मुस्कराते हुए कहा, "अच्छा, तो मैं बताऊं ? हार गया ?"

बच्चा हार मानने को तैयार नही था। मगर अब कोई चारा भी तो नहीं था। वह चुपचाप बैठा रहा। बाप ने उसे और अधिक छेड़ना उचित न समझा। पुचकारते हुए कहा—"अच्छा, हार की कोई बात नही। मैं बताता हूं। बच्चा उत्सुकता से बाप की ओर देखने लगा। बाप ने बड़ा भारी रहस्य-सा प्रकट करते हुए कहा, "टपके से।"

बेटे की कुछ भी समझ में नहीं आया। बाप ने मुस्कराते हुए कहा, "हां, टपके से।"

इतना कहकर उसने छत से टपकते पानी की ओर संकेत कर दिया। बेटा अब समझ गया। वह ताली पीटते हुए बोला, "हां-हां, मैं भी टपके से डरता हूं।"

बेटा टपके की माला जपता हुआ बिस्तर पर लेट गया। बारिश कम होगई थी। बाप ने थपकियां देकर उसे सुला दिया।

कुम्हार को अब अपने गधों का ध्यान आया। वह उन्हें ढूंढने के लिए झोंपड़ी से बाहर निकला।

बाहर पानी से बचने के लिए झोंपड़ी के पास ही एक शेर खड़ा हुआ था। बाप-बेटे की बात सुनकर वह अचरज में डूब गया कि आखिर यह 'टपका' क्या बला है! मैं जंगल का राजा हूं, मगर यह कुम्हार मुझसे नहीं डरता और टपके से डरता है! हो-न-हो, टपका मुझसे सवा सेर है।

बाहर आकर कुम्हार ने एक जानवर को झोंपड़ी से सटे खड़े देखा तो उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। अंधेरे में शेर को तो पहचाना नहीं, अपना गधा समझकर बड़े इतमीनान से उसपर सवार हो गया और उसके कान उमेठने लगा। शेर टपके के खयाल में डूबा हुआ था। कुम्हार को यों एकाएक अपने पर सवारी करते देख उसे विश्वास हो गया कि हो-न-हो, यही टपका है। यह विश्वास होते ही शेर बड़े जोर से भागा।

कुम्हार ने गधे को इस तरह भागते देखा तो वह बड़ा चकराया। वह उसे रोकने लगा, पर रुका ही नहीं। आज तो वह नदी-नाले, पहाड़ सभीको लांघता भागा जा रहा था। इस तरह भागते-भागते दोनों एक नगर के किनारे आगये। पौ फटने

लगी। कुम्हार की निगाह उस मामूली से उजाले में ही अपनी सवारी को पहचान गई। गधे के बजाय शेर को देखकर उसके होश उड़ गये। मुसीबत से बचने के लिए उसने पास के पेड़ की डाली पकड़ ली और उसपर लटक गया। शेर टपके से पिंड छूटने पर जंगल की ओर भाग गया।

कुम्हार आंखें मूंदे पेड़ पर लटका हुआ था कि राजा के नौकर-चाकरों ने उसे आकर घेर लिया। वे उसे बड़े आदर के साथ महल में ले गये। कुम्हार एक मुसीबत से छुटकारा पाने पर चैन की सांस भी न ले पाया था कि दूसरी मुसीबत ने आ घेरा। वह डरकर राजा के पैरों पर गिर पड़ा। राजा ने बड़े आदर के साथ उसे उठाकर अपनी बगल में बैठा लिया। राजपुरोहित ने बढ़कर उसके राजतिलक कर दिया। दरबारियों ने नये राजा की जय-जयकार की।

कुम्हार की समझ में नहीं आ रहा था कि यह सब हो क्या रहा है। कहीं वह सपना तो नहीं देख रहा है! लेकिन बाद में उसे विश्वास हो गया कि वह सपना नहीं, बल्कि वास्तविकता है। हुआ यह था कि उस नगरी के राजा ने यह फैसला किया था कि उस दिन जो भी कोई सबसे पहले महल के सामने से गुजरेगा उसी को वह राज सौंप देगा और स्वयं तपस्या करने चला जायगा। शेर पर सवार होकर सबसे पहले वह कुम्हार महल के सामने से गुजरा था, इसलिए उसीका राजतिलक कर दिया गया।

जीवित शेर पर सवारी करनेवाले राजा को पाकर लोग फूले नहीं समा रहे थे। पर कुम्हार मन-ही-मन टपके के गुण गा रहा था।

: २४ :

भैंस का बटवारा

तीन भाई थे। उनके पिता मरे तो तीनों भाइयों में उनकी संपत्ति के बटवारे की समस्या उठ खड़ी हुई। पिता एक बैल और एक भैंस छोड़ गये थे। चीजें दो थीं, पर उम्मीदवार थे तीन।

बड़े भाई ने बड़े होने के नाते बैल ले लिया। दोनों छोटे भाइयों के लिए भैंस रह गई। मंझला भाई सीधा था, लेकिन छोटा बड़ा चंट था। छोटे भाई ने मंझले भाई से कहा, "भैया, भैंस के दो टुकड़े तो करने से रहे। ऐसा करो, तुम बड़े हो, इसलिए तुम भैंस का आगे का हिस्सा संभालो, मैं पीछे का हिस्सा संभालता हूं।"

मंझला भाई झांसे में आ गया। उसने यह बंटवारा मंजूर कर लिया। अब वह भैंस के आगे के हिस्से का मालिक होने के नाते रोज भैंस की सानी, पानी, चराई आदि की व्यवस्था करने लगा। छोटा भाई इनसब चिंताओं से दूर रहकर भैंस के दूध और गोबर का मालिक बन गया।

इसी तरह कई दिन गुजर गये। मंझला भाई मेहनत करता था, पर पाता कुछ न था। दूध की एक बूंद या गोबर का एक पोटा भी उसके हाथ न लगता। छोटा भाई मंझले की मेहनत से मजे लूटता।

मंझला भाई मन-ही-मन कुढ़ने लगा, किंतु बंटवारे की शर्त के अनुसार वह कह कुछ भी नहीं सकता था।

एक दिन उसने गांव के एक बुजुर्ग के सामने अपनी समस्य

रखी। उसकी हैरानी और छोटे भाई की शैतानी देखकर बुजुर्ग ने सलाह दी, जब तुम्हारा छोटा भाई दूध दुहने बैठा करे तब तुम भैंस को किसी-न-किसी बहाने चमका दिया करो, दूध मत निकालने दिया करो। अपने-आप सीधा हो जायगा।

मंझले भाई ने उसी दिन बुजुर्ग की सलाह के अनुसार काम किया। जैसे ही छोटा भाई दूध दुहने बैठा, वह लट्ठ लेकर पहुंच गया और भैंस के मुंह पर दो-तीन जमाते हुए चिल्लाया—सीधी तरह से खा। सानी को बिगाड़ती क्यों है?

लट्ठ के पड़ते ही भैंस बिदक गई। छोटा भाई दूध नहीं निकाल पाया। जब-जब वह दूध निकालने की कोशिश करता, मंझला भाई झट एक लट्ठ जमा देता। भैंस उछल पड़ती। ।

छोटा भाई चालाक तो था ही, मंझले भाई की चाल समझ गया, पर कर क्या सकता था! आखिरकार हार माननी पड़ी। सानी-पानी, दूध-गोबर सभीमें उसे आधा-आधा हिस्सा डालना पड़ा।

: २५ :

शक्करबहन

दो भाई थे। एक का नाम था अंजी, दूसरे का पंजी। उनके एक बहन थी। नाम था शक्कर। दोनों भाई अपनी इस बहन को बड़े लाड़-प्यार से रखते थे। भौजाइयों को यह ममता बड़ी अखरती थी, मगर पतियों के मारे कुछ बोल नहीं सकती थीं। शक्कर ठाठ से रहती थी।

एक बार अंजी-पंजी दोनों भाई कमाई के लिए परदेस जाने लगे। दोनों ने अपनी-अपनी स्त्री को समझाया कि देखो, हम परदेस जा रहे हैं। हमारे पीछे हमारी लाड़ली बहन को कोई कष्ट न होने पावे।

स्त्रियों ने विश्वास दिलाया कि शक्करबहन को कोई तकलीफ नहीं होगी। वह जिस लाड़-प्यार से अभी तक रहती थी, वैसी ही रहेगी।

यह आश्वासन पाकर अंजी-पंजी परदेस चल दिये। मगर उनके जाने के कुछ ही समय बाद शक्कर की भौजाइयों का रुख बदल गया। उन्होंने शक्कर को हुक्म दया कि जा, बिना झाड़ू के घर को झाड़-बुहार। इतने दिनों से मौज करती रही है। अब ये चोचले नहीं चलने के !

शक्कर बेचारी बड़ी मुसीबत में पड़ गई। उसने अबतक कभी कोई काम नहीं किया था। अब काम मिला तो वह भी इतना टेढ़ा। बिना झाड़ू के घर को कैसे साफ किया जा सकता था !

शक्कर से जब यह काम नहीं बना तो वह बैठकर रोने लगी—

अंजी-पंजी भाई बहन।
विपत पड़ी शक्कर बहन ॥

शक्कर का रोना हवा से नहीं देखा गया। उसने पूछा—"क्यों री, रोती क्यों है? क्या कोई मुसीबत आ पड़ी है?"

शक्कर ने अपनी विपता हवा को बतलाई। हवा ने उसे ढाढ़स बंधाते हुए कहा, "रो मत। यह काम मैं किये देती हूं।"

इतना कहकर हवा बड़े जोरों से चली और घर का सारा कूड़ा-कचरा उड़ा ले गई। शक्कर खुशी-खुशी अपनी भाभियों के पास गई और बोली, "लो, यह काम तो हो गया। अब क्या करूं?"

उसकी भाभियां तो उसे सताने पर तुली हुई थीं। उन्होंने जगह-जगह से फूटी एक गगरी शक्कर को सौंपकर कहा, "जा, तालाब से पानी लाकर घर के सारे बर्तन भर दे।"

शक्कर बेचारी उस फूटी गागर को लेकर तालाब की ओर चली। सोचती जाती थी कि हे भगवान, यह काम कैसे पार पड़ेगा। तालाब पर पहुंचकर उसे भरा और चल दी। मगर दस कदम भी नहीं पहुंची होगी कि गगरी खाली होगई। वह फिर तालाब पर लौटी। गगरी भरकर फिर दौड़ी। मगर फिर वही हाल हुआ। इस तरह कितने ही चक्कर लग गये, मगर पानी की एक बूंद भी वह घर न ले जा पाई। हारकर तालाब के किनारे बैठ गई और रोने लगी—

अंजी-पंजी भाई बहन।
विपत पड़ी शक्कर बहन।

तालाब के किनारे पर बैठे मेंढकों का हृदय शक्कर के रोने से पसीज गया। उन्होंने पूछा, "क्या बात है? क्यों रोती है?"

शक्कर ने सारा हाल कह सुनाया। मेंढकों ने उसे धीरज बंधाते हुए कहा, "घबरा मत, हम तेरी मदद करेंगे।"

इतना कहकर मेंढक फुदक-फुदककर गगरी में कूद गये और उसके सब छेदों को ढक दिया। शक्कर ने दौड़-दौड़कर जरा-सी देर में सारे वर्तन भर दिये।

फिर अपनी भाभियों से जाकर कहा, "बोलो, अब क्या करूं? तुमने जो काम दिया था सो तो हो गया।"

शक्कर को इन टेढ़े कामों को यों निबटाते देखकर उसकी भाभियों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने खीजकर एक और टेढ़ा काम बता दिया, "जा, बिना रस्सी के जंगल से लकड़ियों का गट्ठर ले आ।"

शक्कर बेचारी जंगल में गई। बीन-बीनकर लकड़ियां इकट्ठी कीं। मगर बिना रस्सी के उन्हें घर कैसे लावे? उसने बहुतेरा सोचा, पर कोई रास्ता न निकला। हैरान होकर अपने भाइयों को याद करके वह रोने लगी—

अंजी-पंजी भाई बहन।
विपत पड़ी शक्कर बहन॥

तभी उधर से नागदेव गुजरे। वह शक्कर के रुदन से परेशान होगये। उन्होंने उससे पूछा, "क्या बात है? क्यों रोती है?"

शक्कर ने सारी बात बतला दी। नागदेव बोले, "इतनी-सी बात के लिए रोती है! मैं अभी लकड़ियों से लिपट जाता हूं। तू बहल को उठा ले चल, डरना नहीं।"

शक्कर राजी होगई। नागदेव लकड़ियों से लिपट गये। शक्कर उस गट्ठर को लेकर घर पहुंची। आंगन में उसे रख दिया। नागदेव वापस चले गये। शक्कर की भाभियां आश्चर्य-चकित रह गईं।

शक्कर ने उनसे फिर कहा, "बोलो, अब क्या करूं ?"

उसकी भाभियों ने उससे पिंड छुड़ाने के विचार से खीजकर कह दिया, "जा, जंगल में ढोरों को चरा ला।"

शक्कर ढोरों को लेकर जंगल में गई। ढोरों को तो उसने मैदान में चरने छोड़ दिया, आप एक ऊंचे बड़ के पेड़ पर चढ़ गई। दूर-दूर तक उसने निगाह डाली, मगर उसे अपने भाई दिखाई न दिये।

इसी तरह दिन बीतने लगे। शक्कर रोज अपने भाइयों की राह देखती। एक दिन उसके दोनों भाई परदेस से लौटे। उन्होंने आकर उसी बड़ के पेड़ के नीचे विश्राम किया। शक्कर रोज की तरह आज भी पेड़ पर बैठी हुई थी। इतने दिनों बाद भाइयों को देखकर उसका हृदय भर आया। उसकी आंखों से आंसू बह चले। नीचे बैठे भाइयों पर जब आंसू की बूंदे गिरीं तो वे चौंके। उन्होंने पेड़ पर चढ़कर देखा। शक्करबहन को वहां देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। शक्कर ने जब उन्हें सारा हाल बताया तो उन्हें बड़े जोर से गुस्सा आया। उन्होंने शक्कर को शहद की मक्खी बनाकर जेब में रख लिया और अपने घर पहुंचे। उनकी पत्नियों ने उन्हें देखा तो उनके होश उड़ गये। अंजी-पंजी ने जाते ही पूछा, "शक्कर कहां है ?"

अंजी-पंजी की स्त्रियां बहाने करने लगीं। बोलीं, "कहीं गई होगी। आती ही होगी। तुम्हारे जाने के बाद से तो वह इतनी बदल गई कि हमारी सुनती ही नहीं थी।"

अंजी-पंजी ने क्रोध में भरकर कहा, "तुमने तो उसे कहीं नही भेजा ?"

वे बगलें झांकने लगीं। अंजी-पंजी फिर गरजे, "बोलो।"

उन दोनों ने झूठ बोला, "हमने कहीं नहीं भेजा।"

अंजी-पंजी से यह झूठ बर्दाश्त न हुआ। उन्होंने लाल-पीले होकर कहा, "तो फिर क्या शक्कर अपनी खुशी से ढोर चराने गई है ?"

उन दोनों को काटो तो खून नहीं। अंजी-पंजी ने उन दोनों को दीवार में चुनवा दिया। उसके बाद दोनों भाई और बहन, सब अच्छी तरह से रहने लगे।

: २६ :

गप

एक बादशाह था। उसका वजीर बड़ा विनोदी था। एक दिन बादशाह ने वजीर से कहा, "ऐसी गप सुनाओ, जो न किसीने सुनी हो, न किसीने कही हो।"

वजीर ने कहा, "लीजिये, सुनिये।"

बादशाह बड़े ध्यान से सुनने लगे। वजीर ने कहा, "एक मरतबा एक चींटी के ऊंट पैदा हुआ।"

बादशाह ने उसे रोककर कहा, "वाह वजीरसाहब, चींटी के कहीं ऊंट पैदा हो सकता है?"

वजीर बोला, "हुजूर, टोकिये मत। अभी तो गप की शुरुआत ही है।"

बादशाह ने हँसते हुए कहा, "अच्छा-अच्छा।"

वजीर ने आगे सुनाया, "उस ऊंट की गरदन पंद्रहसौ मील लंबी थी और वह पंद्रहसौ मील दूर एक राजा के बाग की फूल-पत्ती रोज वहीं बैठे-बैठे गरदन लंबी करके खा लेता था।

"वह राजा अपने प्यारे बाग को यों उजड़ते देखकर बड़ा हैरान हुआ। उसने बाग के पहरेदारों को डांटा और सजा दी। उस दिन से पहरेदार और ज्यादा चौकन्ने हो गये। रात को जिसका पहरा था, उस पहरेदार ने अपनी एक उंगली काटकर उसमें नमक-मिरच भर लिया और पूरी मुस्तैदी से पहरा देने लगा। इस ऊंट ने रोज की तरह ठीक आधी रात को गर्दन लंबी करके

चरने के लिए बाग में मुंह डाला। पहरेदार आज सावधान था ही। उसने ऊंट की गर्दन पकड़ ली। ऊंट ने झट गर्दन खींच ली और उस पहरेदार को अपने शहर में लाकर पटक दिया।

"बेचारा पहरेदार बड़ा घबराया। इस अजाने देश में रोजी का और कोई धंधा न देख उसने तुम्बों की खेती की। भगवान की दया से उसके वहां फसल बहुत अच्छी हुई। उसके सब तुम्बे बिक गये। ले-देकर एक बड़ा तुम्बा रह गया। वह उसे वहां के राजा को भेंट कर आया।

"राजा ने तुम्बे की लंबाई-चौड़ाई को देखते हुए उसमें एक महल बनवा दिया।

"उस शहर में एक बार खूब जोर की बारिश हुई। बाढ़ आ गई। सारी प्रजा घबराकर राजा की शरण में पहुंची। राजा ने सारी प्रजा को अपने उस आलीशान 'तुम्बा-महल' में ठहरा दिया। लेकिन बाढ़ में 'तुम्बा-महल' ही पानी में तैरता हुआ बह चला।

"आगे जाकर एक बगुला उस 'तुम्बे-महल' को निगल गया। एक शिकारी इस बगुले के पीछे बहुत देर से लगा हुआ था। उसके डर के मारे बगुला बड़ी तेजी से उड़ा।

"उड़ते-उड़ते उसे एक किसान खेत में हल चलाता दिखाई दिया। अपनी जान बचाने के लिए वह उस किसान के पंजे की बिवाई में छिप गया। शिकारी तो पीछे लगा ही हुआ था। उसने किसान से अपना शिकार मांगा। किसान ने पूछा, "भई, यहां कहां है तेरा शिकार?" शिकारी ने उसके पैर की अंगुलियों की दरार मे छिपे बगुले की ओर इशारा कर दिया। किसान ने बगुले को निकालकर शिकारी को दे दिया।

"उस किसान को अपनी ताकत पर बड़ा घमंड हो गया। वह

हल छोड़कर किसी से लड़ने के लिए निकल पड़ा। उसे अपने बराबर ताकतवर कोई लगता ही नहीं था। चलते-चलते राह में एक बड़ का पेड़ मिला। उसने उस पेड़ को उखाड़कर कंधे पर रख लिया।

"चलते-चलते उसे पता लगा कि यहां पास ही एक पहलवान है, जो रोज साढ़े सातसौ लकड़ी की गाड़ियां जंगल से भरकर खींच कर लाता है।

"किसान वहीं पहुंचा। पहलवान जंगल में काम पर गया हुआ था। उसकी लड़की और औरत घर पर मिलीं। किसान वहां जाकर खड़ा ही हुआ था कि राजा का नौकर संदेशा लेकर आया कि एक हाथी मर गया है। पहलवान की औरत ने लड़की से कहा कि जा, राजा के चूहे को उठाकर फैंक आ।

"लड़की चली। किसान भी उसके साथ हो लिया। वहां पहुंचकर लड़की ने मरे हुए हाथी को सींक से सरकाकर फैंक दिया। किसान मान गया कि जब यह लड़की इतनी ताकतवर है तो इसका बाप तो बेजोड़ होगा। वह लपककर जंगल की तरफ चला।

"आगे बढ़ने पर वह पहलवान लकड़ियों से भरी हुई साढ़े सातसौ गाड़ियां खींचकर लाता हुआ मिला। किसान ने सबसे आखिरी गाड़ी में अपना एक पैर रख दिया। सब गाड़ियां रुक गईं। पहलवान जांच करने के लिए पीछे आया। किसान को गाड़ी पर पैर रखे देख उसने पूछा, "क्यों भई, क्या बात है?"

"किसान बोला, 'मैं तुमसे लड़ना चाहता हूं।'

"पहलवान ने कहा, 'तो आ जाओ।'

"दोनों लड़ने के लिए तैयार हो गये। अब सवाल यह पैदा हुआ कि हार-जीत का फैसला कौन करेगा? दोनों फैसला करने-

वाल को ढूंढ़ने चले। चलते-चलते उन्हें रास्ते में एक औरत मिली। उन्होंने उससे कहा, 'बाई, तू ही हमारा फैसला कर देना।'

"वह औरत बोली, 'मैं तो अपने पति को रोटी देने जा रही हूं। वह साढ़े सातसौ ऊंट चरा रहा है। रोटी देर से पहुंचेगी तो वह मुझे मारेगा। रोज वक्त पर ले जाती हूं, तब भी वह लड़ता है।...हां, एक बात हो सकती है। अगर तुम चाहो तो मेरे सिर पर यह शिला रख दो। इसपर तुम लड़ते रहना। जो नीचे गिर जायगा, वह हारा माना जायगा।'

"किसान और पहलवान को औरत की यह बात जंच गई। पंद्रह मन की उस शिला को उठाकर उन्होंने उस औरत के सिर पर रख दिया और उसपर खड़े होकर वे कुश्ती लड़ने लगे।

"उस औरत के पति ने दूर से आती अपनी औरत के सिर पर दो हट्टे-कट्टे पहलवानों को लड़ते देखा तो उसे पिछले दिन की बात याद आ गई। उसने अपनी औरत को देर से आने पर डांटा था तो उसने कहा था कि मैं कल से दो धांगड़-मूसल ले आऊंगी। अब उसे विश्वास हो गया कि यह अपनी मदद के लिए कहे अनुसार दो धांगड़-मूसल ले आई है। अब अपनी खैर नहीं।

"ऊंटवाले ने डर के मारे अपने साढ़े सातसौ ऊंटों को गठरी में बांधा और सिर पर रखकर भागा।

"असल में उस ऊंटवाले को थोड़ी गलतफहमी हो गई थी। उसकी औरत का धांगड़-मूसल से मतलब मोटी-मोटी रोटियों से था। उसने पहलवान समझ लिया।

"खैर साहब, ऊंटों की गठरी सिर पर रखे बेचारा ऊंटवाला जा रहा था कि एक चील ने झपट्टा मारा और गठरी को उड़ाकर ले गई। उड़ते-उड़ते वह राजा के महल पर आई। रानी उस समय

हल छोड़कर किसी से लड़ने के लिए निकल पड़ा। उसे अपने बराबर ताकतवर कोई लगता ही नहीं था। चलते-चलते राह में एक बड़ का पेड़ मिला। उसने उस पेड़ को उखाड़कर कंधे पर रख लिया।

"चलते-चलते उसे पता लगा कि यहां पास ही एक पहलवान है, जो रोज साढ़े सातसौ लकड़ी की गाड़ियां जंगल से भरकर खींच कर लाता है।

"किसान वहीं पहुंचा। पहलवान जंगल में काम पर गया हुआ था। उसकी लड़की और औरत घर पर मिलीं। किसान वहां जाकर खड़ा ही हुआ था कि राजा का नौकर संदेशा लेकर आया कि एक हाथी मर गया है। पहलवान की औरत ने लड़की से कहा कि जा, राजा के चूहे को उठाकर फेंक आ।

"लड़की चली। किसान भी उसके साथ हो लिया। वहां पहुंचकर लड़की ने मरे हुए हाथी को सींक से सरकाकर फेंक दिया। किसान मान गया कि जब यह लड़की इतनी ताकतवर है तो इसका बाप तो बेजोड़ होगा। वह लपककर जंगल की तरफ चला।

"आगे बढ़ने पर वह पहलवान लकड़ियों से भरी हुई साढ़े सातसौ गाड़ियां खींचकर लाता हुआ मिला। किसान ने सबसे आखिरी गाड़ी में अपना एक पैर रख दिया। सब गाड़ियां रुक गईं। पहलवान जांच करने के लिए पीछे आया। किसान को गाड़ी पर पैर रखे देख उसने पूछा, "क्यों भई, क्या बात है?"

"किसान बोला, 'मैं तुमसे लड़ना चाहता हूं।'

"पहलवान ने कहा, 'तो आ जाओ।'

"दोनों लड़ने के लिए तैयार हो गये। अब सवाल यह पैदा हुआ कि हार-जीत का फैसला कौन करेगा? दोनों फैसला करने-

बाल को ढूंढ़ने चले। चलते-चलते उन्हें रास्ते में एक औरत मिली। उन्होंने उससे कहा, 'बाई, तू ही हमारा फैसला कर देना।'

"वह औरत बोली, 'मैं तो अपने पति को रोटी देने जा रही हूं। वह साढ़े सातसौ ऊंट चरा रहा है। रोटी देर से पहुंचेगी तो वह मुझे मारेगा। रोज वक्त पर ले जाती हूं, तब भी वह लड़ता है।...हां, एक बात हो सकती है। अगर तुम चाहो तो मेरे सिर पर यह शिला रख दो। इसपर तुम लड़ते रहना। जो नीचे गिर जायगा, वह हारा माना जायगा।'

"किसान और पहलवान को औरत की यह बात जंच गई। पंद्रह मन की उस शिला को उठाकर उन्होंने उस औरत के सिर पर रख दिया और उसपर खड़े होकर वे कुश्ती लड़ने लगे।

"उस औरत के पति ने दूर से आती अपनी औरत के सिर पर दो हट्टे-कट्टे पहलवानों को लड़ते देखा तो उसे पिछले दिन की बात याद आ गई। उसने अपनी औरत को देर से आने पर डांटा था तो उसने कहा था कि मैं कल से दो धांगड़-मूसल ले आऊंगी। अब उसे विश्वास हो गया कि यह अपनी मदद के लिए कहे अनुसार दो धांगड़-मूसल ले आई है। अब अपनी खैर नहीं।

"ऊंटवाले ने डर के मारे अपने साढ़े सातसौ ऊंटों को गठरी में बांधा और सिर पर रखकर भागा।

"असल में उस ऊंटवाले को थोड़ी गलतफहमी हो गई थी। उसकी औरत का धांगड़-मूसल से मतलब मोटी-मोटी रोटियों से था। उसने पहलवान समझ लिया।

"खैर साहब, ऊंटों की गठरी सिर पर रखे बेचारा ऊंटवाला जा रहा था कि एक चील ने झपट्टा मारा और गठरी को उड़ाकर ले गई। उड़ते-उड़ते वह राजा के महल पर आई। रानी उस समय

नहा रही थी। अचानक गठरी चील की चोंच से छूटकर उसकी आंख में गिर पड़ी। रानी ने अपनी नाइन से उसे निकाल देने को कहा। नाइन ने झट उसे निकालकर अपनी चोली में रख लिया।

"घर जाकर उसने वह गठरी खोली। खोलते ही साढ़े सात-सौ ऊंट निकल पड़े। वह निहाल होगई, और गप थी सो पूरी हो गई।"

सुनकर बादशाह इतना खुश हुआ कि उसने वजीर को भी निहाल कर दिया।

: २७ :

सतवंती

सात भाई थे। उनके एक बहन थी। बहन का नाम था ीरनबाई।

गणपति को छोड़कर बहन सब देवताओं की पूजा करती थी। जब कोई इसका कारण पूछता तो वह कहती, "दूंद दुंदालो, सूड संडालो। नाना नाना हाथ पांव, डबर्‌यो पेट। ओकी पूजा कौन करे ?"

बार-बार बीरनबाई के मुंह से यह बात सुनकर गणपति को एक दिन गुस्सा आ गया। उन्होंने उसे छलने की ठानी।

वह भौंरे का रूप धरकर आधी रात को बीरनबाई के कमरे में घुसे और उसके बिस्तर पर इत्र की शीशी रखकर चले गये। बीरनबाई गहरी नींद में सोती रही।

सवेरे बीरनबाई की एक भाभी रोज की तरह अपनी ननद का बिस्तर उठाने आई। उसे बिस्तर पर इत्र की शीशी मिली। उसने फौरन वह शीशी ले जाकर अपने पति को बतलाई और उनकी सतवंती बहन के बारे में उल्टी-सीधी बहुत-सी बातें कहीं।

दूसरे रोज फिर गणपति उसी तरह आधी रात को भौंरे क. रूप धरकर आये और मर्दाना जूता रखकर चले गये। फि भाइयों के पास बीरनबाई की शिकायत पहुंची। इसके बाद रो रात को गणपति आते और कोई-न-कोई बदनाम करनेवाली ची

छोड़कर चले जाते। भाइयों के पास रोज शिकायतें आने लगीं तो वे बड़े चकराये। बड़े भाई ने एक दिन फैसला किया कि अच्छा, मैं आज रात को पहरा दूंगा। देखूंगा, बीरनबाई के पास कौन आता है ?

वह उस रात नंगी तलवार लेकर बहन के पलंग के पास बैठ गया। आधी रात को गणपति रोज की तरह भौंरे का रूप धरकर आये। बड़े भाई ने उनसे पूछा, "तुम कौन हो ? यहां क्यों आये हो ?"

गणपति ने अपना असली रूप प्रकट करते हुए कहा, "मैं गणपति हूं। तेरी यह बीरनबाई मेरी पूजा नही करती है। इतना ही नहीं, लोगों के सामने मेरी बुराई करती फिरती है। इसीलिए मुझे यह दंड देना पड़ा।"

बड़े भाई ने गणपति के पैरों पर पड़कर कहा, "महाराज, इसे क्षमा करें। यह नादान है। आगे यह ऐसी गलती नही करेगी।"

यह सुनकर गणपति वापस चले गये।

बड़े भाई ने सवेरे बीरनबाई को समझाया, "तू आज से गणपति की भी पूजा किया कर और उनकी हँसी मत उड़ाया कर।"

बीरनबाई ने भाई की बात मान ली। उस दिन से वह गणपति की पूजा करने लगी। उसकी बुराई करना भी उसने बंद कर दिया। उधर गणपति ने भी उसे छलना बंद कर दिया। बीरनबाई की भौजाइयों को अब शिकायत का मौका ही न मिलने लगा।

कुछ दिनों बाद वहां के राजा ने एक मंदिर बनवाया। इस

मंदिर पर जब कलश चढ़ाने लगे तो वह किसीसे चढ़ा ही नहीं। पंडितों ने पोथी-पत्रा देखकर कहा, "जो सतवंती होगी, उसीके हाथ से यह कलश चढ़ेगा।"

सारे राज में सतवंती की खोज होने लगी। ढोंड़ी पिटी कि जिसे अपने सत पर विश्वास हो वह आकर मंदिर का कलश चढ़ाये। सारे राज्य में से कोई भी स्त्री कलश चढ़ाने नहीं आई। बीरनबाई की भौजाइयां भी नहीं गईं।

आखिर एक दिन बीरनबाई उस मंदिर में पहुंची। उसने कलश चढ़ाया तो वह चढ़ तो गया, मगर जरा-सा टेढ़ा रह गया। बीरनबाई ने यह देखकर कहा, "एक बार कपिला गाय के बछड़े ने पेशाब किया था तो उसके कुछ छींटे मुझपर पड़ गये थे। मैंने उसका बुरा माना था। मेरे सतवंती होने में अगर उसीसे कसर आई हो तो यह कलश सीधा हो जाय।

कलश उसी घड़ी सीधा हो गया।

उस दिन से लोग बीरनबाई को बहुत मानने लगे और वह सुख से रहने लगी।

: २८ :

चार बात

राजा विक्रम आधी राते भेस बदली ने परजा को दुख-सुख जाणने का वास्ते निकळ्या। रोज को उनको यो नेम थो।

चलते-चलते वे गरीब हुण का मोल्ला में पोंच्या। व्हां कोई का रोणे की भणक उनका कान में पड़ी। उनने कयो व्हां कोई-ने-कोई दुखी है जरूर। वे झट वईं आड़ी बड़्या। देखे तो सामे एक टूटी फूटी झोंपड़ी है। उमेंसे ज रोणे की आवाज अई री थी। राजा झोंपड़ी को टट्टो सरकईं ने भीतर गया। भीतर दो बूढ़ी खंक डोकरी हुण गोठणा में माथो दई ने रोती देखाणी। राजा ने उनसे पूछ्यो—"माजी, तमारे कईं दुख है ? यूं आदी राते क्यों रोवो हो ?"

डोकरी हुण ने माथो ऊंचो करीं ने कयो—"बेटा, हमखे कईं दुख नी है। विक्रम सरीका राजा का राज में भला कोण दुखी होयगो ?"

राजा डोकरी हुण की बात सुणी ने बड़ा चकराया। उनने डोकरी हुण से पूछ्यो—"फिर तम रोईं क्यों रई हो ?"

डोकरी हुण बोली—"बेटा, रोवां नी तो कईं करां ? परजा पालक राजा विक्रम की आज का दिनज मौत है। ओका मर्या बाद तो हम अनाथ हुईं जावांगा।"

इत्तो कईं ने डोकरी हुण पाछी रोणे मंडी गईं। राजा गरीब से गरीब परजा को असो प्रेम देखी ने गळगळा हुईं गया। उनने

डोकरी हुण खे पछी टोकी ने पूछ्यो—"क्यों माजी, कोई तरकीब से राजा की मौत टळी नी सके कई ?"

डोकरी हुण बोली—"बेटा, विधाता माता का लेख कदी टळ्या है ? ......पण देख राजा जो इन चार बात हुण पे अमल करे तो शायद बची जाय।"

भेस बदल्या हुवा राजा विक्रम ने पूछ्यो—"कोणसी चार बात माजी ?"

डोकरी हुण बोली—"सुण भई, चार बात ये हैं—लूण भोजन सार, रात जागी सार, सार विचार सार और बैरी आदर सार। समज्यो ?"

राजा ने इन चारी बात हुण खे हिरदा में उतारी ली और उण डोकरी हुण खे धीरज बंधई ने चालता हुवा।

होते-होते डोकरी हुण ने जो दिन राजा की मौत को बतायो थो, वो अई पोंच्यो। राजा ने उना दिन छत्तीस तरे का पकवान ने बत्तीस तरे की शाक-भाजी बणवई। पण लूण काय में बी नी नाखणे दियो। महेल खे उना दिन अच्छी तरे से सजायो। महेल जगमग-जगमग करने मंड्यो। राजा ने अपना नाता-रिस्तावाळा हुणखे महेल का दूसरा बारणा पे उबा करी दिया ने आप हे तो जई ने सदर दरवाजा पे ऊबा हुई गया।

ऐन आदी रात को टेम हुवो ने विधाता माता घम-घम करती अई। राजा स्वागत वास्ते ऊबाज था। उनने माता खे अच्छी तरे से बधई। हीरा-मोती उनका ऊपर से उड़ाया। नीचे नमी ने उनका पांव लाग्या। बड़ा मान से उनखे लई ने महेल में आया। विधाता माता असो स्वागत देखी ने चकित हुई गई। उनने राजा से कयो—"राजा, हूं तो थारे लेणे खे अई हूं।"

राजा विक्रम हाथ जोड़ी ने बोल्या—"चलो मांसाब, हाजर हूं।...पण एक अरज है। आप पेलां भोजन तो करी लो, फिर चलांगा।"

विधाता माता मानी गई। राजा ने छत्तीस तरे का पकवान ने बत्तीस तरे की भाजी, जो तैयार करई थी, वा उनका सामे परसी। विधाता माता ने सब चीज चाखी। लून नी होणे से सब फीकी फस लागी। विधाता माता समजी गई। उनने मुस्करई ने कयो—"राजा लूण मंगा।" राजा ने लूण मंगई दियो। माता ने प्रेम से भोजन कर्यो। खई-पीने माता बोली—"राजा, तूने आदर से म्हारो हिरदो जीती लियो। जा मनें थारी जान बक्सी। भोजन में लूण को जो जगा है, वोज थारी इना राज में है। थारा बिना यो राज अलोणा भोजन सरीको हुई जायगो। सो जा तू बेखटके राज कर ने परजा खे सुख दे।

इत्तो कई ने माता जसी छम-छम करती अई थी, वसीज चली गई। जाती-जाती राजा का कुमार खे लेती गई। चित्रगुप्त ने ओका कुमार खे देखी ने कयो—"यो तो विक्रमकुमार है, विक्रम राजा नी है। इका दिन तो अबी घटे है। इखे पाछो भेजो।"

राजकुमार पाछो जीवी गयो। ओने नगरी में सबखे या बात सुणई। राजा को काल टळ्यो जाणी ने परजा ने जै-जैकार कर्यो। राजा ने डोकरी हुण की बतई चारी बात सबखे याद रखणे खे कयो।



'मंडल' के प्रमुख प्रकाशन

गांधी-साहित्य
(गांधीजी-लिखित)

प्रार्थना-प्रवचन : २ भाग	५.५०
गीता-माता	४.००
पंद्रह अगस्त के बाद	२.००
धर्म-नीति	२.००
दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह	३.५०
आत्मकथा (संपूर्ण)	४.००
आत्म-संयम	३.००
अनासक्तियोग	०.७५
अनीति की राह पर	१.००
देश-सेवकों के संस्मरण	१.२५
गांधीजी ने कहा था ९ भाग	२.२५

विभिन्न लेखकों द्वारा

इंग्लैंड में गांधीजी	२.००
गांधी की कहानी	४.००
गांधी-अभिनंदन-ग्रंथ	४.००
गांधी-श्रद्धांजलि-ग्रंथ	३.००
गांधीजी की छत्रछाया में	१.५०
जीवन-प्रभात	५.००
बापू	२.००
डायरी के पन्ने	१.००
बापू की कारावास-कहानी	१०.००
बापू के आश्रम में	१.००
गांधी-विचार-दोहन	१.५०
श्रद्धा-कण	०.७५
स्वतंत्रता की ओर	४.००
सर्वोदय की बुनियाद	०.७५

विनोबा-साहित्य

ईशावास्यवृत्ति	०.७५
ईशावास्योपनिषद्	०.१२
उपनिषदों का अध्ययन	१.००
गांधीजी को श्रद्धांजलि	०.३७
जीवन और शिक्षण	२.००
भूदान यज्ञ	०.२५
राजघाट की संनिधि में	०.६२
विचार-पोथी	१.००
विनोबा विचार (दो भाग)	३.००
शांति-यात्रा	१.५०
स्थित-प्रज्ञ-दर्शन	१.००
स्वराज्य-शास्त्र	०.५०
सर्वोदय का घोषणा-पत्र	०.२५
सर्वोदय-विचार	१.१२

जवाहरलाल नेहरू

मेरी कहानी (संपूर्ण)	८.००
मेरी कहानी (संक्षिप्त)	२.५०
राजनीति से दूर	२.००
राष्ट्रपिता	२.००
हिंदुस्तान की कहानी (सं.)	२.५०
विश्व-इतिहास की झलक (,,)	६.००
हिन्दुस्तान की समस्याएं	२.००

डा. राजेन्द्रप्रसाद

आत्मकथा (नया संस्करण)	८.००
गांधीजी की देन	१.५०

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

कुब्जा-सुंदरी	२.००
महाभारत-कथा	५.००
शिशु-पालन	०.५०

क्रोपाटकिन

क्रांति की भावना	२.५०
नवयुवकों से दो बातें	०.३७
रोटी का सवाल	३.००

इतिहास राजनीति

अठारह सौ सत्तावन	२.५०
आधुनिक भारत	५.००
कांग्रेस का सं० इतिहास	५.००
भा० नव-जागरण का इति०	३.००
राजनीति-प्रवेशिका	१.००
हमारा कानून	५.००

संस्मरण

अमिट रेखाएं	३.००
एक क्रांतिकारी के संस्मरण	०.७५
काश्मीर पर हमला	२.००
मानवता के झरने	१.५०
मेरे संस्मरण	२.००
मील के पत्थर	२.००
मेरी जीवन-यात्रा	२.००
मैं भूल नहीं सकता	२.५०
विनोबा के साथ सात दिन	०.५०
साधना के पथ पर	२.५०
एक आदर्श महिला	१.००
लोकमान्य तिलक	२.५०
श्रेयार्थी जमनालालजी	६.५०
स्मरणांजलि	१.५०

यात्रा

लद्दाख-यात्रा की डायरी	२.५०
हिमालय की गोद में	२.००
जापान की सैर	१.५०
जय अमरनाथ	१.५०
दुनिया की सैर	१.२५
उत्तराखंड के पथ पर	२.००

उपन्यास, कहानी व नाटक

लट के बंधन	२.००
देवदासी	२.००
कित्तूर की रानी	२.००
नवीन यात्रा	२.००
कहावतों की कहानियां	२.००
जातक-कथा	२.५०
सप्तदशी	२.००
नवप्रभात	१.००
रीढ़ की हड्डी	१.५०
जीवन-पराग	०.७५

लोक-कथाएं

हमारी लोक-कथाएं	१.५०
पुण्य की जड़ हरी	१.५०
जैसी करनी वैसी भरनी	१.५०
सतवंती	१.५०

आध्यात्मिक

तुकाराम-गाथा-सार	१.५०
थेरी-गाथाएं	१.५०
पुरुषार्थ	६.००
आत्मोपदेश	१.००
शिष्टाचार	०.५०
बुद्धवाणी	१.००
बुद्ध और बुद्ध-साधक	१.५०
भागवत-धर्म	५.५०
युगधर्म	१.७५
भागवत-कथा	३.५०
भारत-सावित्री	३.५०
मनन	१.५०
रामायणकालीन समाज	४.००
रामायणकालीन संस्कृति	४.००
संत सुधासार (संक्षिप्त)	५.००

निबंध तथा साहित्य

अशोक के फूल	३.००
कल्पवृक्ष	३.००
केरली-साहित्य-दर्शन	४.००
जीवन-साहित्य	२.००
पंचदशी	१.५०
भारतीय संस्कृति	३.५०
रूप और स्वरूप	०.६२
साहित्य और जीवन	२.००



लोक-कथा-माला की पुस्तकें

१. हमारी लोक-कथाएं

—विभिन्न जनपदों की कथाएं

२. पुण्य की जड़ हरी

—ब्रज की लोक-कथाएं

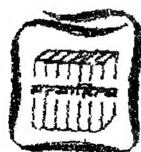
३. जैसी करनी वैसी भरनी

—बुंदेलखंड की लोक-कथाएं

४. सतवंती

—मालवा की लोक-कथाएं

४



डेढ़ रुपया